चन्दामामा
जून १९६७
75 P

Chandamama Press
VADAPALANI
MADRAS-26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of others....

ख़ुर्दबीन से देखिए कितना फ़र्क है इन 'ब्रिसल टिप्स' में !

बिनाका
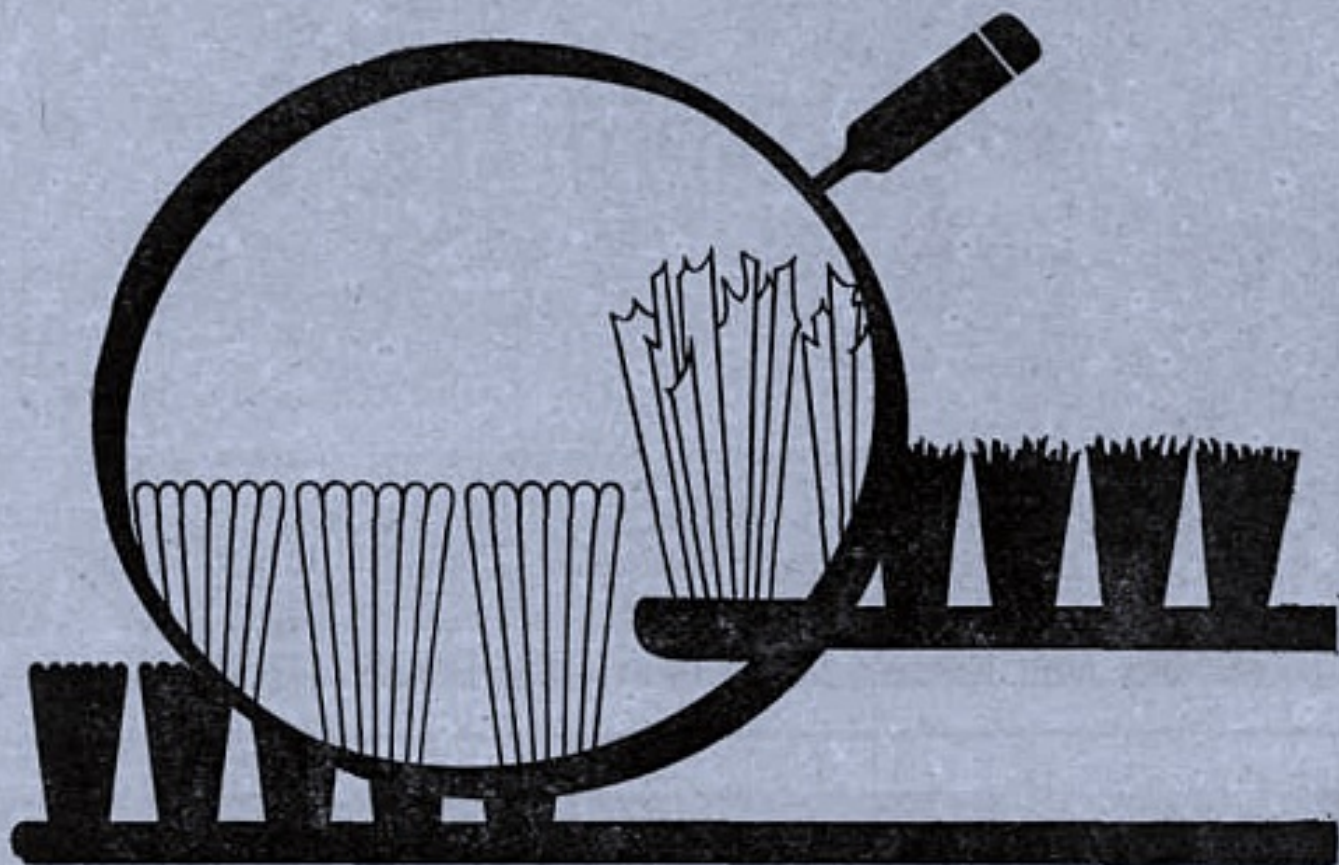
टूथब्रश

के 'गोल ब्रिसल टिप्स' बिल्कुल निरापद हैं-
REG. PAT. NO. 69453
इनसे मसूड़ों के कटने-फटने का कोई डर नहीं !

अच्छी सफ़ाई, सही सफ़ाई
बिनाका से सफ़ाई

CIBA

दिलीप और उसके साथी
पिकनिक के लिये एक टापू पर गए
अरे, इतनी देर हो गई....इसका मुझे ख्याल ही न रहा। चलो, हमलोग अब सामान बाँध लें और लौट चलें।
सर, सर...नाँव का पता ही नहीं।
नाँव रस्सी से फिसलकर बह गई होगी। खैर, उठते हुए ज्वार से लगता है यह ज्यादा दूर नहीं गई।
यहाँ तो अब अंधेरा हो गया...और हवा भी बहुत तेज चल रही है.... दियासलाई से काम नहीं चल सकता।
घबराओ मत। मेरे पास 'एवरेडी' टॉर्च है —इसके ज़रिये हमलोग जल्दी ही नाँव ढूंढ़ निकालेंगे।
आह, वह रही! जल्दी करो, कहीं और न दूर चली जाए। दिलीप, अपनी टॉर्च से नाँव पर रोशनी फेंको और मैं तैरकर उस तक पहुँचने की कोशिश करता हूँ।
मास्टर साहब नाँव के करीब पहुँच रहे हैं। वाह-वाह! वे नाँव पर चढ़ रहे हैं और अब घबराने की कोई बात नहीं!
जी हाँ, मास्टर साहब और 'एवरेडी' टॉर्च ने कमाल किया!

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

हमारे देश में दान की बड़ी महिमा गाई गई है। परन्तु जितना महत्व परिश्रम का है, शायद दान का नहीं है। दान यदि उदारता का लक्षण है, तो कभी कभी अभिमान का भी है। स्वाभिमानी परिश्रमी न इसे स्वीकारते हैं, न देते ही हैं।

हम दान के बारे में इस अंक में एक कहानी दे रहे हैं।

वर्ष : १८ जून १९६७ अंक : १०

कलकत्ता गाँव नगर बन गया। १७३५ में वहाँ की जनसंख्या एक लाख थी। वहाँ के बन्दरगाह से प्रति वर्ष दस हजार टन माल जाने लगा। परन्तु पश्चिमी तट पर १८ वर्ष तक ब्रिटिश लोगों का व्यापार नुक्सान पर चलता रहा। इसका कारण मराठे नौकाधिपतियों और पोर्चुगीज़ों का संघर्षण था।

इसके बाद अंग्रेज़ों का व्यापार अच्छी तरह चलने लगा। १७४४ में बम्बई की जनसंख्या ७०,००० थी। १७३९ में इन्गिलश कम्पनी ने पेशवा से समझौता किया और मराठे नौकाधिपतियों से युद्ध करके उनके अड्डे—सुवर्णदुर्ग, घेरियाल को ले लिया। घेरियाल को पकड़नेवालों में क्लाईव भी था। मद्रास में कम्पनी का व्यापार ठीक तरह चल रहा था।

फ्रेन्च ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने सूरत, मछलीपट्टनं नगरों में फेक्टरियाँ स्थापित कीं। १६७४ में उन्होंने पोन्डीचेरी में अपना उपनिवेष बनाना शुरु किया। १७०६ में पोन्डीचेरी की जनसंख्या ४०,००० थी। उस वर्ष कलकत्ता की जनसंख्या २२,००० ही थी। १७२५ में माहे, १७३९ में कारैकाल उनके आधीन में आये। बहुत समय तक फ्रेन्च अपना व्यापार मात्र ही देखते रहे। १७४२ में उनमें भी औपनिवेषक महत्वाकाँक्षायें जगने लगीं। भारत में फ्रेन्च आधिपत्य स्थापित करने के लिए डूले ने निश्चय किया। इस प्रकार ब्रिटिश और फ्रेन्चों में झगड़ा बढ़ा और भारत के इतिहास में एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ।

बीस वर्ष तक कर्नाटक प्रान्त में, अंग्रेज़ों और फ्रेन्च लोगों में तनातनी बनी रही।

६८. प्रथम कर्नाटक युद्ध

और आखिर भारत में फ्रेन्चों का आधिपत्य ही खतम हो गया। इसके परिणाम स्वरूप यह भी साफ हो गया कि भावी भारत के विधाता अंग्रेज़ थे न कि फ्रेन्च। क्योंकि इस तनातनी के कारण देश में असम्भावित परिणाम हुए थे, इसलिए कर्नाटक युद्ध का हमारे देश के इतिहास में विशेष स्थान है।

सच कहा जाय तो यह तनातनी एक व्यापारिक होड़ के रूप में प्रारम्भ हुई, फिर बढ़ती गई, आखिर इतनी बढ़ी कि यह मुगल साम्राज्य तक को निगल गई।

कर्नाटक (कोरमण्डल) के तट पर अंग्रेज़ों के व्यापार का केन्द्र मद्रास और फ्रेन्च व्यापार का केन्द्र पोन्डीचेरी था। दोनों नगरों में फौज थी। एक एक नगर में पाँच सौ गोरे और २५,००० भारतीय सैनिक हुआ करते थे। पोन्डीचेरी के कुछ दक्षिण में सेन्ट डेविड़ का किला भी अंग्रेज़ों के पास था। ये तीनों नगर समुद्र के तट पर ही थे। इनकी रक्षा के लिए या यहाँ माल उतारने के लिए नौका बल का होना अत्यन्त आवश्यक था। क्योंकि स्थानीय लोगों के पास नौका शक्ति न थी, इसलिए समुद्र के आधिपत्य के लिए अंग्रेज़ों और फ्रेन्चों में युद्ध होता रहा। स्थानीय राजाओं का समुद्र पर तो कोई अधिकार था नहीं, भूमि पर भी उनका अधिकार जाता रहा। सारे कर्नाटक में अराजकता फैल गई। कर्नाटक का ईलाका दक्खन के सूबेदार के नीचे एक परगणा-सा था, उसका अर्काट नवाब गवर्नर था। पर जैसा कि दक्खन का सूबेदार निजामुल मुल्क स्वतन्त्र-सा था, उसी प्रकार अर्काट नवाब भी स्वतन्त्र राजा की तरह था। निजाम व्यस्ततावश अपनी दृष्टि कर्नाटक के मामलों पर केन्द्रित न कर सका।
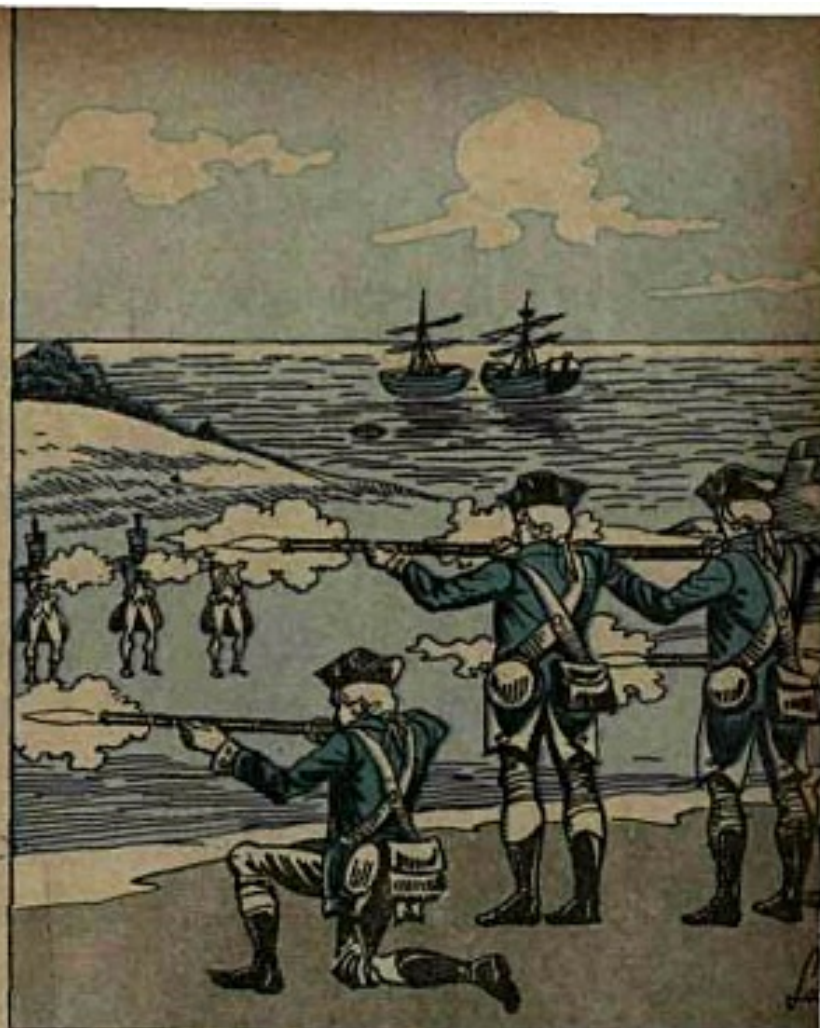
१४४३ में उसकी दृष्टि कर्नाटक की ओर गई। उससे तीन वर्ष पहिले महाराष्ट्रियों ने कर्नाटक पर हमला किया, उसे लूटा, गवर्नर को मार दिया और उसके दामाद चन्दा साहेब को कैदी बनाकर वे सतारा ले गये। गवर्नर के लड़के ने मराठों को एक करोड़ रुपया देकर अपने प्राणों और राज्य की रक्षा करने की सोची। पर उसके एक सम्बन्धी ने उसकी हत्या कर दी। इस तरह की घटनाओं से कर्नाटक की प्रजा आतंकित हो उठी। इसलिए निजाम स्वयं वहाँ गया। अनवुरुद्दीन खान को वहाँ नवाब नियुक्त करके परिस्थिति को सुधारने का प्रयत्न किया, पर वह अपने प्रयत्न में सफल न हुआ। पुराने नवाब के बन्धु बड़ी बड़ी जागीरें दबाये बैठे थे। उन्हें नये नवाब का आना गँवारा न था।

कर्नाटक की इस अराजकता से अंग्रेजों और फ्रेन्चों के व्यापार में किसी प्रकार की बाधा न आयी। तब वे भी व्यापार में मुनाफ़ा बनाने में मग्न थे, उनका भारतीय राजनीति से कोई सरोकार न था। अगर यही नीति उनकी रहती तो न मालूम क्या होता। परन्तु १७४०-४८ युरुप में आस्ट्रिया की गद्दी के लिए जो युद्ध हुआ उसमें इन्लेन्ड भी फँस गया। फ्राँन्स भी इसमें शामिल था, परन्तु दोनों देश एक दूसरे के विपक्ष में थे। यह युद्ध आठ वर्ष चलता रहा। इस युद्ध का इन देशों के व्यापार पर भी असर पड़ा। इस युद्ध से बचने के लिए और दोनों देशों में शान्ति स्थापित करने के लिए डूप्ले ने प्रयत्न किया, पर वह सफ़ल न हुआ।

नेहरू की कथा

[३५]

लार्ड वेवेल ने एक योजना के अनुसार (वेवेल प्लेन) कान्ग्रेस वर्किन्ग कमेटी के सदस्यों को १५ जून १९४५ को जेल से रिहा करवा दिया।

वेवेल प्लेन के मुताबिक एक कोन्सिल बनाई गई, जिसमें हिन्दू और मुसलमान समान संख्या में थे और उस कोन्सिल को प्रचलित राज्य प्रणाली के अनुसार शासन करना था। वायसराय और कमान्डर चीफ़ के अधिकार पहिले की तरह ही थे।

जवाहर रिहा होने के बाद, जहाँ जहाँ गये, वहाँ वहाँ उनका बड़ा स्वागत किया गया।

जब वे जेल में थे, अगस्त १९४२ के आन्दोलन का जवाहर ने यद्यपि समर्थन न किया था, तो भी उसमें जो आहुति हो गये थे, उनकी उन्होंने प्रशंसा की। १९४३ कलकत्ता में, काले बाजार में, जो अनाज़ के लिए छीना झपटी हुई, उसकी भी तीव्र निन्दा की।
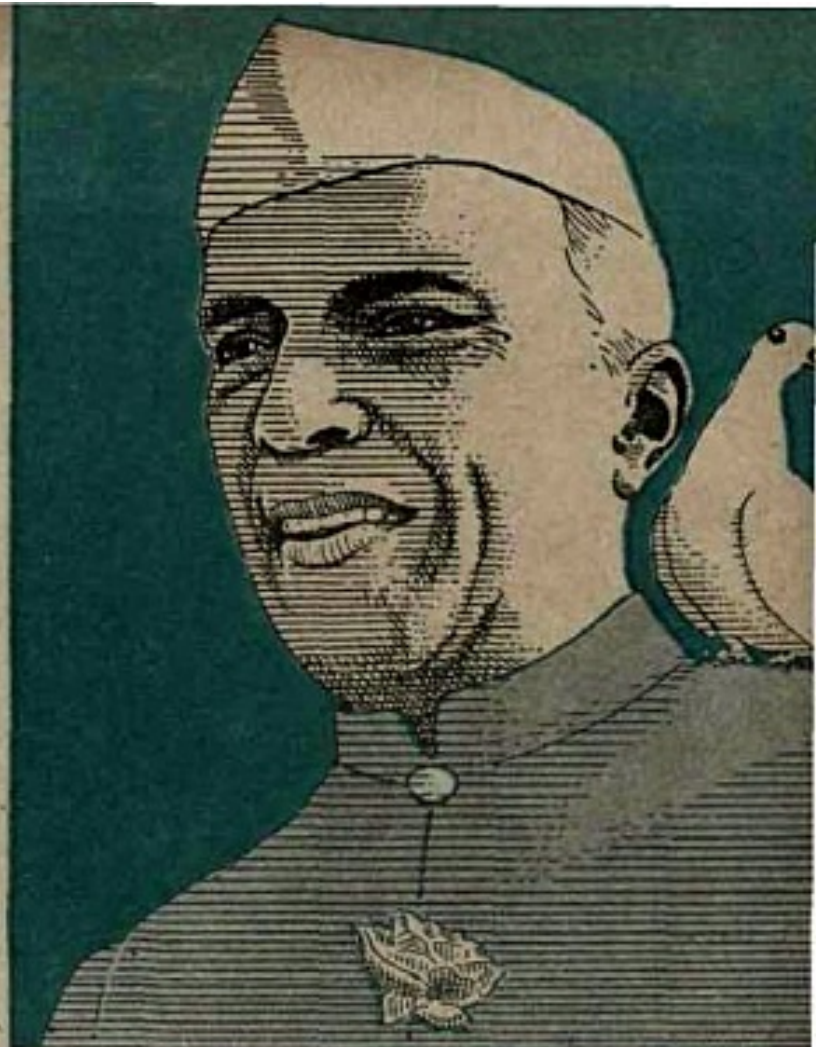
वेवेल प्लेन पर चर्चा करने के लिए कान्ग्रेस के अध्यक्ष मौलाना आज़ाद ने जवाहरलाल नेहरू को शिमला निमन्त्रित किया। परन्तु शिमला सम्मेलन पूर्णतः विफल रहा। जिन्ना ने उसको भंग कर दिया। जवाहर को कभी भरोसा न था कि वेवल की योजना सफ़ल होगी।

१९४५ सितम्बर में कान्ग्रेस कमेटी ने "क्विट इन्डिया" प्रस्ताव को पुनः प्रकटित किया। कान्ग्रेस सम्पूर्ण स्वतन्त्रता चाहती थी। यदि यह सन्धि समझौते से न मिली, तो कोई सक्रिय कार्यवाही करना
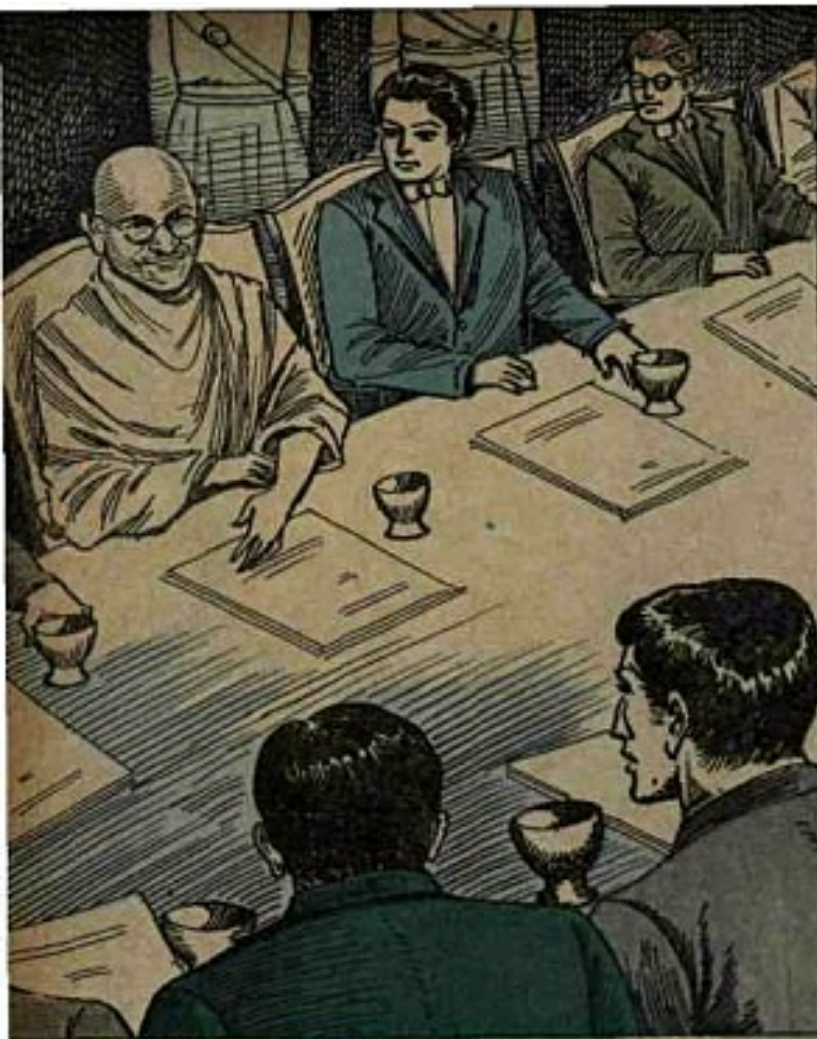
चाहती थी। चुनाव में भाग लेने के लिए कॉंग्रेस राजी हो गई।

भारत में स्वतन्त्रता मिलने से पहिले ही चुनाव आये। तब तक ब्रिटेन में मज़दूर पार्टी के हाथ शासन की बाग डोर आ गई थी, कुछ विराम के बाद उन्होंने १९४५ के अन्त में चुनाव की व्यवस्था की। इससे देश किस ओर जा रहा था, वे स्पष्टतः जान सकते थे। यह जानते हुए भी कि चुनाव से स्वतन्त्रता न मिलेगी, कान्ग्रेस ने उसमें भाग लिया। ११ नवम्बर १९४५ में जवाहरलाल ने बम्बई में, एक विराट सभा में भाषण दिया। "दिल्ली चलो" के नारे से वह सभा शुरु हुई।

"कई प्रान्तों में कान्ग्रेस विजयी होकर रहेगी। आठ नौ प्रान्तों में कान्ग्रेस की सरकार स्थापित होकर रहेगी। दिल्ली में केन्द्रीय सरकार भी हमारे हाथ में आनी चाहिये। देश को स्वतन्त्र होना है। स्वतन्त्रता ही हमारा मुख्य लक्ष्य है।" जवाहरलाल नेहरू ने कहा।

भारत की स्वतन्त्रता में क्या क्या बाधायें हैं और उनको कैसे हटाया जा सकता है। यह जानने के लिए ब्रिटिश पार्लियामेन्ट प्रतिनिधि वर्ग ४५ दिसम्बर में भारत आया। इसमें ८ सदस्य थे। ये सब दलों के प्रतिनिधियों से मिले। तीन महीने तक वे अपनी कोशिशें करते रहे? भारतीय विधान का निर्धारण भारतीय ही करें, इसकी व्यवस्था तुरत की जा सकती है और जब तक विधान बन नहीं जाता तब तक एक अन्तरिम सरकार की व्यवस्था की जा सकती है।

अन्तरिम सरकार के निर्माण के लिए वायसराय ने कान्ग्रेस को निमन्त्रित किया। कान्ग्रेस की ओर से जवाहर ने यह

निमन्त्रण स्वीकार किया और उन्होंने जिन्ना से भी सहयोग करने की अपील की। पर जिन्ना ने अपना सहयोग देने से इनकार कर दिया।

जवाहर ने अन्तरिम सरकार की स्थापना की। इसमें उनके साथ कान्ग्रेस के मूर्धन्य चुने हुए नेता भी थे। वे थे, सरदार पटेल, डा. राजेन्द्रप्रसाद, सी. राजगोपालाचारी, शरतचन्द्र बोस और आसफ अली। इस सरकार की स्थापना की घोषणा २४ अगस्त १९४६ को वायसराय ने की। इसके छः दिन बाद जवाहरलाल नेहरू ने रेड़ियो पर बोलते हुए कहा—"यह सरकार पूर्ण स्वतन्त्रता के लिए एक सीढ़ी-सी है। हमारा उद्देश्य शायद उतना पास नहीं है, जितना कि लोग सोचते हैं।"

२ सितम्बर से इस अन्तरिम सरकार को काम करना था। उसी दिन से जिन्ना ने अपना सक्रिय विरोध भी प्रारम्भ किया। उस दिन को सिन्ध और बेन्गाल में अवकाश का दिन घोषित कर दिया गया। सिन्ध तो शान्त रहा, पर कलकत्ते में साम्प्रदायिक दंगे शुरु हो गये और कई
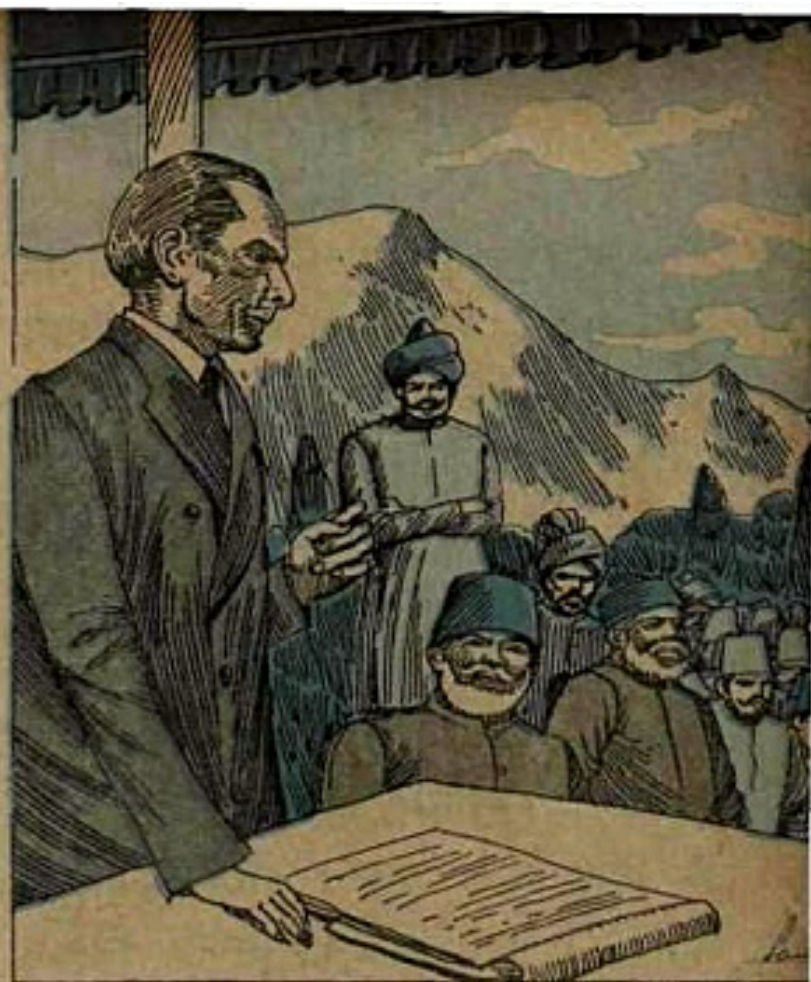
मारे गये। कलकत्ता में अभी दंगे शान्त हुए थे कि नौखाली में और साथ बम्बई में दंगे फसाद शुरु हो गये। कान्ग्रेस द्वारा शासित बिहार भी बदला लेने के लिए तैयार हो गया।

"भारत देश यदि स्वतन्त्र होना चाहता है, तो इससे अधिक साम्मदायिक सहिष्णुता की आवश्यकता है।" वायसरायने कहा।

"जब सब के लिए समान अवसरों की व्यवस्था की जा रही है, तो किसी प्रकार के सन्देह, भय और संघर्षण की क्या जरूरत है?" जवाहर ने पूछा।

वायसराय मुस्लिम लीग से बातचीत करने लगा। वह चाहता था, कि मुस्लिम लीग भी अन्तरिम सरकार में हिस्सा ले। इसलिए उसने जिन्ना को २९ जुलाई में दिल्ली निमन्त्रित किया। जिन्ना और जवाहर के बीच बातचीत हुई। उन दोनों में तो कोई समझौता नहीं हुआ, पर जिन्ना ने वायसराय की सलाह पर अन्तरिम सरकार में मुस्लिम लीग को भाग लेने के लिए प्रेरित किया। दोनों पार्टियों के नेताओं ने एक सम्मिलित सरकार बनाई। उसमें छः कान्ग्रेस मन्त्री और छः मुस्लिम लीग के मन्त्री थे।

इस सरकार में शामिल होने के लिए जवाहरलाल ने दो नियम रखे (१) संविधान सभा में सम्मिलन (२) सामूहिक दायित्व। मुस्लिम लीग ने संविधान सभा में भाग लेने से इनकार कर दिया। जब जब सम्भव हुआ, तब तब वह दूसरे नियम का भी उलंघन करता रहा। सरकार को रद्द करने के लिए वह वायसराय के ईशारे पर चलती रही। मन्त्रिमण्डल में कान्ग्रेस मन्त्री और लीगी मन्त्रियों में एकता न थी।

जवाहर फँस गये थे। उन्होंने इस्तीफा देना चाहा, पर दिया नहीं साम्प्रदायिक दंगों के कारण पंजाब में रावलपिण्डी, लाहौर, अमृतसर, मुल्तान, नगरों में कई मारे गये। मार्च १९४७ में कान्ग्रेस कमेटी की मीटिन्ग हुई और उसमें पंजाब की परिस्थिति के बारे में चर्चा हुई और यह निश्चय किया गया कि पंजाब का विभाजन हो, मुस्लिम प्रधान भाग एक बने और दूसरा हिन्दु प्रधान।

पाताल दुर्ग

[१३]

[बौने राक्षस ने नौका को नदी के बहाव की ओर चलाया। भील उस पर पत्थर फेंक रहे थे। नौका नदी के एक पत्थर से टकराई और टुकड़े टुकड़े हो गई। बौना राक्षस एक स्त्री के साथ तट पर आ गया। धूमक और साथी जब किनारे पर पहुँच रहे थे, तो एक उजड़े शिवालय से एक बड़ा वनमानस उनकी ओर आने लगा। बाद में—]

धूमक सब से आगे था। उसने अपनी ओर आते हुए वनमानस और उसके पीछे पेड़ों पर बैठे और पशुओं को देखा। वह जान गया कि वनमानस और और जन्तु सब उसी की ओर देख रहे थे।

"विरूप....क्या आश्चर्यजनक नहीं है कि मनुष्य से क्रूर से क्रूर जन्तु भी डरकर भाग जाता है? परन्तु इनका व्यवहार कुछ भिन्न-सा मालूम होता है। शायद इन जन्तुओं ने अभी तक मनुष्यों को नहीं देखा है।" धूमक ने कहा।

विरूप, धूमक की बातें नहीं सुन रहा था। वह अपने कन्धे पर बैठे गरुड़ पक्षी को सहार रहा था और एक एक कदम आगे रखता, वह चिल्लानेवाले वनमानस की ओर देखने लगा। धनुष पर बाण

सोमक को बाण न छोड़ने के लिए संकेत करते हुए उसने कहा—"यह बनमानस पेड़ पर बैठे जन्तुओं का सरदार जान पड़ता है। अगर हमने इसे मार दिया, तो वे सब हम पर हमला करेंगे। इसे डराकर भगा देना अच्छा होगा।"

इतने में पुलिन्द जोर से चिल्लाता तमेड़ों की ओर भागा। "वह बौना राक्षस मेरी पत्नी को लेकर जंगल में भागा जा रहा है। हमारा यहाँ क्या काम है? पहिले इस दुष्ट को पकड़ो। मुझे अपनी पत्नी को उसके चुंगल से छुड़ाना है।"

लगाकर धूमक आज्ञा के लिए प्रतीक्षा करने लगा।

पुलिन्द यह सब कुछ नहीं देख रहा था। उसकी दृष्टि नीचे नदी के किनारे पर लगे बौने राक्षस पर और नीचे ज़मीन पर पड़ी स्त्री पर थी।

तमेड़ चलानेवाले चारों भील डर से काँप रहे थे। वे अपने सरदार के ईशारे पर नदी के तमेड़ों पर कूदने के लिए तैयार थे।

धूमक ने निश्चल खड़े हो, भाले से वनमानस की ओर निशाना लगाया।

भीलों के सरदार पुलिन्द की बात धूमक को ठीक ही लगी। यदि उसने बौने राक्षस को पकड़ लिया, तो उससे महाकली के बारे में बहुत से भेद जाने जा सकते हैं।

सोमक और धूमक ने अपने ऊपर राजकुमारी कान्तिसेना को छुड़ाने की जिम्मेवारी ले रखी थी। वे तभी अपने प्रयत्न में सफल होते जब कि वे जवान पत्नी पाने के लिए पुलिन्द की मदद करते और विरूप की कालशम्बर के

कुशलता के बारे में जानने की सहायता करते।

"पुलिन्द ठहरो, हम आ रहे हैं। क्यों इन जंगली जानवरों से आफ़त मोल लेते हो? तमेड़ों में चलो वहीं चलें, जहाँ वह राक्षस उतरा है। राक्षस इस बीच जंगल में कहीं नहीं गया होगा।" धूमक ने कहा।

तब सब तमेड़ों की ओर भागे। धूमक और सोमक वनमानस को बिना पीठ दिखाये, होशियारी से चलने लगे। परन्तु उनको इस तरह तमेड़ों की ओर भागता देख, वनमानस छाती आगे करके चिल्लाता उछल कूद करने लगा और शाखाओं पर बैठे जन्तु नीचे उतरकर, धूमक की ओर भागने लगे।

यह खतरनाक परिस्थिति है। अगर वे पीठ दिखाकर भागते, तो इससे पहिले कि वे तमेड़ों के पास पहुँचते, वनमानस और भालू उन पर आ कूदते। अगर वे डटकर उनका मुकाबला करते, तो कितनों से लड़ते?

धूमक यह सोचता, मुड़कर सोमक से कुछ कहना ही चाहता था कि

सोमक का पैर फिसला और वह लड़खड़ाया।

यह देख वनमानस ने उस पर लपकना चाहा। परन्तु विरूप इतने में जोर से चिल्लाया—"आहा, शाम्भवी! काल गुरु....तुम अपना बल दिखाओ। यह ही उसके लिए अच्छा मौका है।" कहते हुए अपने कन्धे के गरुड़पक्षी को वनमानस की ओर छोड़ा।

गरुड़ अपने पंख फड़फड़ाता बिजली की तरह वनमानस के सिर पर चोंच से मारने लगा। चोट से वनमानस लड़खड़ाया!

CHITRA

तुम अपने रास्ते जाओ और मैं अपने रास्ते।"

यह सुनकर, धूमक ने हँसकर कहा—"हम में यह कहा जाता है कि ठिगना बड़ा चालाक होता है। तुम राक्षसों में भी ठिगने को चालाक समझा जाता होगा। तुम भी बड़े चालाक होगे। हमारी तुम से कोई दुश्मनी नहीं है। हम केवल तुमसे महाकली राक्षस के पाताल दुर्ग का रास्ता जानना चाहते हैं। हमें वह रास्ता बता दो, तब तुम अपने रास्ते जाना और हम अपने रास्ते चले जायेंगे।"

"जो पाताल दुर्ग गये हैं, वे कभी जीवित नहीं आये हैं। उसे जानकर, क्यों अपने पैर घिसना चाहते हो? एक दो महीने यहीं घूमते रहो। महाकली राक्षस के आदमी आयेंगे और तुम्हारे हाथ पैर बाँधकर वे तुम्हें पाताल दुर्ग ले जायेंगे।" बौने राक्षस ने कहा।

"यह नहीं, हमें चुपचाप बिना उसके जाने, उसके दुर्ग में जाना है और एक राजकुमारी को बचाकर लाना है। हमने उसको बचाने की जिम्मेवारी अपने ऊपर ले रखी है।" धूमक ने कहा।

"मेरी जवान पत्नी भी उसी के जेल में होगी, इसमें कोई शक नहीं है। उसी के नौकर ही तो, उसे जंगल में से उठा ले गये थे। उस महाकली राक्षस को मारकर उसके खून से अपनी प्यास बुझाऊँगा। उसे जीता जी नहीं छोड़ूँगा।" पुलिन्द ने कहा।

बौना राक्षस बिना कुछ कहे, धूमक के पास आया—"जो कुछ मुझे खबरदार करना था मैंने कर दिया है, आगे तुम्हारी

इच्छा। अगर कुछ हो गया, तो मुझे बुरा भला न कहना। पाताल दुर्ग पहुँचने का मैं तुम्हें एक रास्ता बताता हूँ। मेरे साथ आओ।" कहता वह उनको साथ लेकर, उजड़े मन्दिर के पास ले गया।

मन्दिर अभी कुछ दूर ही था कि धूमक ने रुककर कहा—"क्या हम उस मन्दिर के आँगन में जा रहे हैं? वहाँ के क्रूर पशुओं के बारे में भी तो सोचो। हम उनके कारण कुछ देर पहिले अच्छी आफ़त में फँस गये थे।"

"तुम जानते नहीं थे, इसलिए तुमने उन्हें छोड़ा। वे राक्षस तो पालतू जानवर हैं। अगर तुमने जंगली फल उनके पास फेंके, तो वे बच्चों से भी सीधे हो जाते हैं।" उसने कहा। फिर राक्षस ने पास के पेड़ से कुछ फल तोड़े।

धूमक आदि ने भी उसकी तरह कुछ फल तोड़े और मन्दिर के पास पहुँचते ही, उन्होंने उन्हें जंगली जानवरों के सामने फेंक दिये।

बौना राक्षस उनको मन्दिर में ले गया। कुछ अन्धेरी कोठरियों में से उनको ले गया। आखिर वह टूटी फूटी दीवार फाँद गया और नीचे एक खड्ड को दिखाते हुए उसने कहा—"पाताल दुर्ग जाने के लिए एक ही रास्ता है और वह रास्ता यह है।"

धूमक और उसके साथियों ने सिर झुकाकर उस खड्ड में देखा। उसमें बड़े बड़े मगर और सर्प थे। वे आपस में भिड़-भिड़ा से रहे थे। पर दीवार पर मनुष्यों को देखते ही, वे मुख खोलकर उनकी ओर देखने लगे। (अभी है)

समझौता

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, मैं नहीं जान पाता कि तुम्हारा यह असाधारण श्रम क्यों नहीं सफल हो रहा है। समीर की तरह तुमने भी अनजाने किसी नियम का उल्लंघन किया होगा। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यूँ कहानी सुनानी शुरु की।

गन्धमादन पर्वत के समीप एक क्षत्रिय कुटुम्ब रहा करता था। यद्यपि उनके पास थोड़ी बहुत ज़मीन थी, पर खेती उनका पेशा न था। पिता-पुत्र अपने क्षत्रिय धर्म

वेताल कथाएँ

का पालन करते हुए हमेशा युद्ध की तलाश में इधर उधर घूमा करते, इस कारण पिता और तीन पुत्रों को युद्ध में अकाल मरना पड़ा। कुटुम्ब में आखिर बचे अन्तिम लड़का, समीर और उसकी माँ।

जब उसके पति और लड़के एक ही बार मर गये, तो समीर की माँ ने सोचा कि क्षत्रिय धर्म काफ़ी हो गया था। इसलिए उसने समीर को खेती के काम में लगाया, गौ भैसों को देखने का काम भी सौंपा। समीर उन कामों को अच्छी तरह निभाता।

देखते देखते समीर बीस वर्ष का युवक हो गया।

"मेरा लड़का सुन्दर है! उसे उसके योग्य स्त्री मिलनी चाहिये। न मालूम उसके भाग्य में क्या लिखा है?" माँ सोचा करती।

एक दिन समीर ने स्वयं पूछा—"क्यों माँ, क्या मैं शादी नहीं करूँ?"

"शादी कर लेनी चाहिये। पर क्या कहीं कोई लड़की है?" माँ ने पूछा।

"यही तो मुझे भी नहीं मालूम है।" समीर ने कहा।

इस बातचीत के कुछ दिनों बाद समीर अपनी गौवों को पहाड़ पर एक झील के पास चराने ले गया। गौव्वें चर रही थीं और समीर ने एक पेड़ के सहारे, झील की ठण्डी बयार के कारण, आँखें मूँद लीं। उसको इस हालत में किसी स्त्री की ये बातें सुनाई दीं।

"निद्रा माया है,
स्वप्न झूट,
आँखें खोलकर
कन्या को देखो।"

समीर चौंका, उसने आँखें खोलीं तो उसे लगा कि वह सपना देख रहा था। उससे कुछ दूरी पर, पानी पर, पैर समेटकर बैठकर एक सुन्दरी, घने काले बालों को सोने के कँघे से संवार रही थी।

उसके मुख से बात न निकली। वह उसे देख इतना खुश था कि उसे डर लगा कि वह कहीं अन्तर्धान न हो जाये। थोड़ी देर बाद, उसने एक रोटी को लेकर, जिसको उसकी माँ ने उसे बाँधकर दिया था, पानी के किनारे जाकर, उसको वह इस तरह दिखाई जैसे वह चाहता हो कि वह उसे ले।

"जली रोटी,
अयोग्य पति"

जोर से हँसकर वह पानी में जा डूबी। उसके जाते ही, समीर को लगा जैसे उसकी अक्ल ही कहीं चली गई हो। वह उसी जगह को घंटों इस तरह देखता रहा मानों उस पर किसी ने जादू कर दिया हो। इतने में गौव्वें रम्भाने लगीं। घर जाने का समय हो गया था। समीर अन्यमनस्क-सा उनको घर हाँककर ले गया।

"अरे....क्यों यूँ मुँह लटकाये हुए हो?" माँ ने समीर को देखते ही पूछा। माँ को अपने लड़के में बड़ा परिवर्तन दिखाई दिया।

समीर ने जो कुछ पहाड़ पर झील के पास गुज़रा था, वह बता दिया।

"सारी गलती मेरी ही है। किसी काम में मैं लगी रही और रोटी जल गई, कल देखना कितनी अच्छी रोटी बनाकर दूँगी।" माँ ने कहा।

अगले दिन उसकी माँ ने बड़ी अच्छी रोटियाँ बनाकर दीं और वह उनको लेकर

गौव्वों के साथ झील के पास गया। उस दिन भी ठंडी बयार के कारण, आँखें भारी होकर मुँद गईं। फिर उसे उस स्त्री की आवाज सुनाई दी। वह फिर रोटी हाथ में लेकर, पानी के किनारे गया। उसे रोटी दिखाई।

"कच्ची रोटी,
नाकाफी पति।"

यह कहती वह झट पानी में जा कूदी और फिर शाम तक वह न दिखाई दी।

समीर ने घर आकर माँ से कहा—"कल रोटी जला दी थी और आज कच्ची ही दे दी।"

"इस बार देखना, बेटा।" कहकर माँ ने तीसरी बार बड़ी अच्छी रोटी बनाकर दी।

समीर को जब इस बार वह पानी पर दिखाई दी। "क्यों यह रोटी लेकर मेरे साथ शादी करोगी? तुम्हें मैं फूलों की तरह देखूँगा। यदि तुम मेरी पत्नी बनी, तो मुझ जैसा भाग्यशाली दुनियाँ में कोई न होगा।"

"अच्छी रोटी
बढ़ा पति"

कहकर वह पानी के पास आई। उसका हाथ पकड़कर, वह किनारे पर आई—"मैं तुम से शादी करूँगी। परन्तु एक शर्त है, अगर तुमने मुझे बिना एक कारण के तीन बार चोट की तो मैं तुम्हारे साथ नहीं रहूँगी। अगर तुम इसके लिए राजी हो, तो बताओ, नहीं तो मैं अभी घर वापिस चली जाऊँगी।"

समीर चकित हो उठा। "मैं भला तुम्हें एक बार ही क्यों बिना कारण के पीटूँगा? मुझे इस विषय में सोचना ही बुरा मालूम होता है। मैं तुम्हारी शर्त खुशी खुशी मानता हूँ।"

वह उसके साथ उसके घर चली आई और उससे उसने शादी कर ली। समीर की माँ ने सोचा कि यदि कोई देवी उसकी बहू बनी थी, तो वह उसके पूर्वजन्म के पुण्यों का परिणाम ही था। वह जब तक जीवित रही, तब तक अपनी बहू को उसने बड़े लाड़ प्यार से देखा।

समीर को अपनी पत्नी के साथ गृहस्थी करके ऐसा लगा, जैसे वह स्वर्ग में रह रहा हो। उनके तीन लड़के भी हुए। पर उनके बुरे दिन बड़े अजीब ढ़ंग से शुरु हुए।

पास के घर वालों की एक लड़की हुई। नामकरण संस्कार के लिए उन्होंने पति-पत्नी को बुलाया।

"मैं अभी एक छोटा-सा काम देखकर आती हूँ। इस बीच तुम नहा धोकर, कपड़े बदलकर जाने के लिए तैयार रहो।" यह कह समीर बाहर चला गया।

आध घंटे बाद, जब वह वापिस आया उसकी पत्नी जहाँ बैठी थी, वहाँ से उठकर ही न आई, उसने उसके कन्धे पर हाथ टेककर पूछा—"क्यों अभी यूँ बैठी हो, जल्दी तैयार हो।"

"तुमने मुझे बिना कारण के मुझे मारा है। यह पहिला मौका है। मैं पहिले ही कह चुकी हूँ कि मैं तीन बार चोट सहूँगी।" उसकी पत्नी ने कहा।

समीर ने चकित होकर पूछा—"तो तुम इसे चोट कहते हो?"

"और क्या कहा जाये और बिना किसी कारण के तुमने मुझे मारा है।" पत्नी ने कहा।

इसके बाद, समीर को अपनी गृहस्थी ऐसी लगी, जैसे वह किसी तलवार की धार पर चल रहा हो।

कुछ समय बीत गया। पड़ोस में किसी का विवाह हुआ। समीर और उसकी पत्नी को न्यौता आया। दोनों गये। शादी में जब दुल्हा दुल्हिन के गले में ताली बाँध रहा था, तो समीर की पत्नी जोर से रोने लगी। पास ही बैठे समीर ने उसके हाथ पर थप थपाकर कहा—"बस करो, वे खुशी खुशी शादी कर रहे हैं और तुम रो रही हो।"

"मैं यह सोचकर रोई थी कि अब इनके कष्ट प्रारम्भ हो जायेंगे। मुझे तुमने बिना किसी कारण मारा है, अगर तीसरी बार मुझे मारा, तो मैं नहीं सहूँगी।" समीर की पत्नी ने कहा।

समीर को ऐसा लगा जैसे उसका सारा सुख-सन्तोष उसके हाथ से फिसला जा रहा हो। अगर उसकी पत्नी यूँ अड़ी रही, तो समीर ने सोचा कि वह कभी भी उसे खो सकता था।

थोड़ा समय और गुज़रा। समीर के पड़ोस में कोई मर गया। समीर अपनी पत्नी के साथ उनसे मिलने गया। शव के चारों और बैठे सब रो रहे थे कि समीर की पत्नी जोर से हँसी। समीर ने अनायास अपनी पत्नी की पीठ थप थपाकर कहा—"बस भी करो। सब क्या सोचेंगे?"

वह और जोर से हँसी। "जो मर गया है, उसके सब कष्ट खतम हो गये हैं। तुमने मुझे बिना किसी कारण तीसरी बार मारा है। हम दोनों का सम्बन्ध खतम हो गया है।" यह कहकर वह सीधे झील की ओर गई और उसमें कूदकर अदृश्य हो गई। समीर उसको फिर न देख सका।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, समीर की पत्नी ने क्यों इतनी बेसमझी दिखाई? इसका क्या कारण

था ? विवाह के समय का नियम और जब कभी उसने अपने हाथ से उसे रोका, उसे पीटना समझना, फिर अपनी बात पर अड़े रहना क्या आपत्ति जनक नहीं है ? अगर तुमने इन सन्देहों का जान बूझकर समाधान न किया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"समीर की पत्नी के व्यवहार को, अगर उसकी दृष्टि से देखा जाये तो उसमें न कुछ अनुचित है, न आपत्तिजनक ही। वह देवी थी, फिर भी वह एक मनुष्य के साथ विवाह करके रहने के लिए मान गई। वह समीर से प्रेम कर सकती थी, पर उसके जीवन में हाथ नहीं बँटा सकती थी। अपने वैवाहिक जीवन से मुक्त होने का मार्ग वह कभी न कभी चाहती थी, इसलिए ही उसने वह शर्त रखी थी। जन्म, विवाह और मृत्यु को जिस दृष्टि से मनुष्य देखते हैं, उस दृष्टि से देवियाँ या देवता नहीं देखते। इसलिए वह नामकरण संस्कार में नहीं जाना चाहती थी, विवाह में इसलिए ही रोई थी। तभी ही उसको अपना वैवाहिक जीवन अखरने लगा होगा। फिर जब कोई मरा, तो वह खुशी में अपनी हँसी न रोक सकी, पर वह खुश तो वस्तुतः इसलिए थी क्योंकि उसको मानव बन्धनों से मुक्ति मिल रही थी। इन सब बातों के कारण हमें उस पर दया करनी चाहिये उसे बुरा भला नहीं कहना चाहिये।"

इस प्रकार राजा का मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और शव के साथ फिर वृक्ष पर जा बैठा।

(कल्पित)

दान का रहस्य

एक गाँव में एक हरिभक्त रहा करता था। वह बड़ा गरीब था। वह गाँव गाँव घूमकर हरिकथा सुनाया करता और लोग जो थोड़ा बहुत देते उससे अपना गुज़ारा किया करता। एक बार, भक्त एक गाँव में गया। उस गाँववालों ने उससे हरिकथा सुनवाने का निश्चय किया। इसलिए गाँव के प्रमुख हरिभक्त को धनी शामलाल के घर ले गये। उससे उन्होंने कहा—"अगर आपके घर हरिकथा हो, तो अच्छा होगा। भक्त को, हम जितना दे सकेंगे, उतना इकट्ठा करके दे देंगे। आपकी क्या राय है?"

शामलाल सच कहा जाये, तो रसिक नहीं था। पर वह खुश था कि गाँववाले उसकी यूँ प्रतिष्ठा बढ़ा रहे थे। वह मान गया। उसने यह भी चाहा कि भक्त उसके घर ठहरे भी।

उसी दिन रात को शामलाल के घर के सामने के प्राँगण में हरिकथा की व्यवस्था की गई। भगवान के चित्र के पास एक बड़ी परात रखी गई। हरिकथा सुननेवाले अपनी अपनी शक्ति के अनुसार, उसमें हरिकथा के लिए पैसे डाल सकते थे। पहिले ही कई ने उसमें पैसे डाल दिये थे। कई ने बाद में पैसे डालने चाहे। शामलाल ने हरिभक्त को देने के लिए एक शाल और सौ रुपयों की एक थैली, वरान्डा में रख रखी थी। कथा के समाप्त होने पर वह उन्हें हरिभक्त को देना चाहता था।

उसी गाँव में चरणलाल नाम का एक छोटा धनी भी था। आते ही उसने हरिभक्त को गले में तीन रुपये का शाल डाला और परात में उसने चार रुपये डाले और अगली पंक्ति में जा बैठा।

बड़ा साहुकार शामलाल एक आँख से देखता जाता था कि कौन कितना दे रहा था। चरणलाल ने ही तब तक सबसे बड़ी रकम दी थी और वह भी दस रुपये से कम ही थी, ऐसी हालत में वह भला सौ रुपये और एक शाल क्यों दे? दस रुपये और एक जोड़ी धोती दे दी गई, तो काफ़ी है।

हरिभक्त कथा शुरु करके सुनाता जाता था। इस बीच, शामलाल इस तरह उठा, मानों किसी काम पर जा रहा हो। उसने थैली में से शाल और रुपयों की छोटी थैली निकाल ली और उनकी जगह उसने एक जोड़ी धोती और दस रुपये रख दिये और फिर अपनी जगह आ बैठा।

हरिभक्त शुरु से ही शामलाल को बड़े ध्यान से देख रहा था। उसके मन में उठनेवाले विचारों को भी वह उसके मुह पर देखता आ रहा था, वह इसलिए यह भी जान गया था कि वह अन्दर क्यों

गया था? शामलाल के वापिस आकर बैठ जाने के बाद उसने यह कहानी सुनाई।

कर्ण बड़ा दानी था। उसने कभी किसी याचक को न न कहा। जब वह स्नान के लिए जा रहा था, तो उसके सेवकों ने जाकर उससे कहा कि कोई ब्राह्मण आया हुआ था। कर्ण ने उस ब्राह्मण को अपने पास बुलाया।

जब वह ब्राह्मण पहुँचा, तो वह बायें हाथ में सुवर्ण पात्र में तेल डालकर, दायें हाथ से शरीर पर तेल लगा रहा था।

"महाराज! मैं गरीब हूँ। जो आप उचित समझें, दीजिये...." ब्राह्मण ने कहा।

महादानी कर्ण ने अपने बायें हाथ के सुवर्ण पात्र को उसे दान दे दिया।
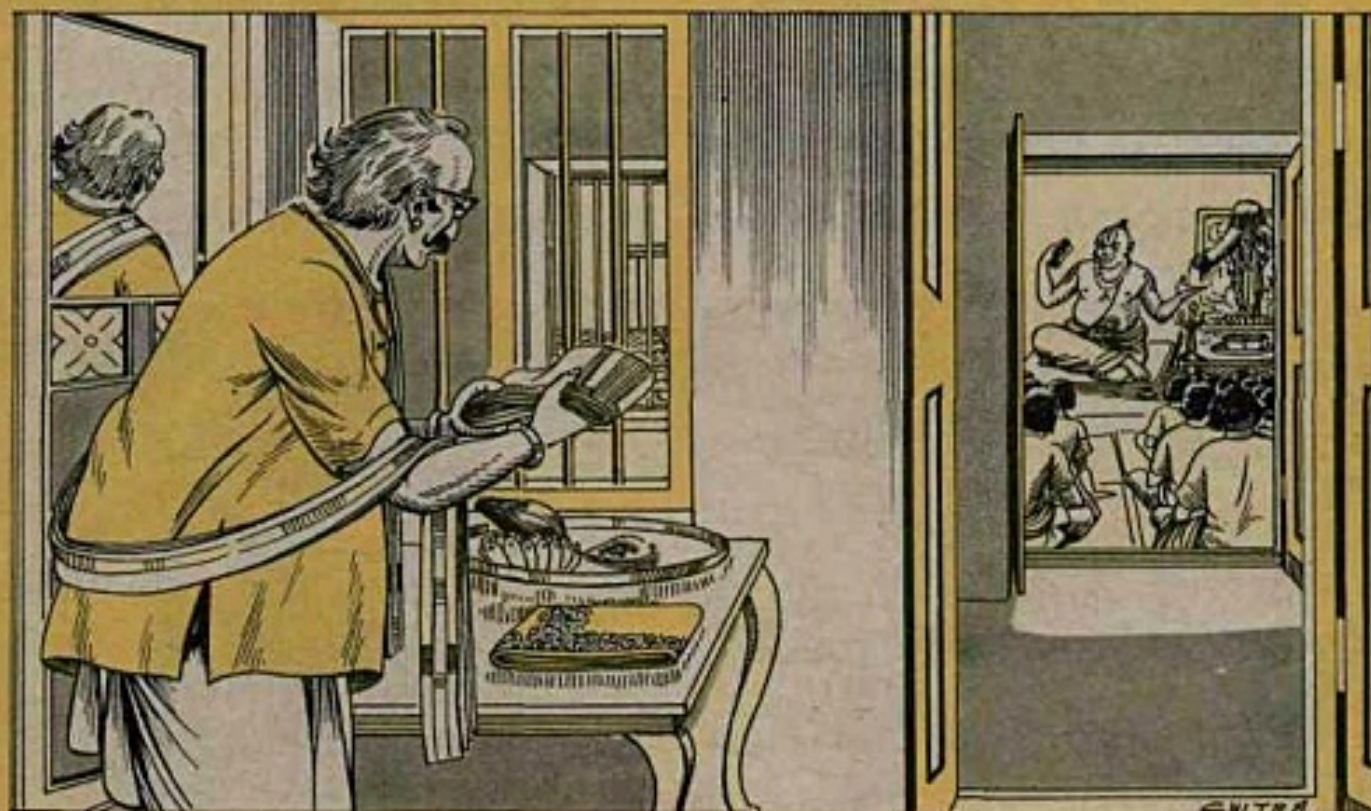
ब्राह्मण ने उसे बड़े सन्तोष से स्वीकार किया—"महादानी हैं आप। पर क्या कोई बायें हाथ से दान देता है? इस तरह देने का रहस्य है?"

कर्ण ने मुस्कराकर कहा—"दान देते समय यह भेद ही सबको जानना चाहिए। जो दान देना है, उसे बिना देरी के दो। जब मैंने तुम्हें दान देना चाहा, तब यह पात्र मेरे बायें हाथ में था। अगर मैं उसे दायें हाथ से देने की कोशिश करता, तो हो सकता है कि इस बीच मेरा विचार ही बदल जाता....इसलिए बायें हाथ का दान मैंने बायें हाथ से ही दिया।"

यह छोटी कहानी सुनाकर, हरिभक्त असली कहानी पर आया। परन्तु शामलाल पर इस कहानी का असर चपत का-सा हुआ। कथा समाप्त होने पर, उसने भक्त को जितना उसने पहिले देने की सोची थी, उससे कहीं अधिक देकर, उसका सम्मान किया।

पगला

एक गाँव में एक किसान के तीन लड़के थे। बड़े दो अक़्लमन्द थे, पर तीसरा मूर्ख था। जब पिता गुज़र गया, तो बड़े दोनों ने आपस में सम्पत्ति बाँट ली और छोटे को कुछ न दी।

"सब तुमने ही ले ली। यह बड़ा अन्याय है?" तीसरे ने कहा।

"तुम निरे बावले हो, देने से कोई फायदा नहीं, तुम्हारे पास रहेगी नहीं।" उसके भाइयों ने कहा। पर तीसरे ने जिद पकड़ी। भाइयों ने उसे एक बूढ़ा बैल देकर कहा—"यह रहा तुम्हारा हिस्सा, ले लो।"

इतने में जंगल के उस पार हाट का दिन आया। तीसरे भाई ने हाट में अपना बूढ़ा बैल बेचने की सोची। वह उसे लेकर निकल पड़ा।

जंगल में एक सूखा पेड़, रास्ते के पास ही था। वह हवा के कारण झूमता किर किर कर रहा था। तीसरा भाई अपने बैल को जब उस पेड़ के पास से ले जा रहा था, तो उस पेड़ की ध्वनि सुनकर उसने पूछा—"क्यों, मेरा बैल खरीदना चाहते हो?"

पेड़ ने किर किर किया।

"बस, एक ही भाव है, बीस रुपये। चाहो तो खरीदो, नहीं तो छोड़ दो।" तीसरे भाई ने कहा।

पेड़ ने फिर किर किर किया।

"कह रहे हो कि कल पैसे दे दोगे? वचन देकर मुकरोगे तो नहीं? यह लो, मेरा बैल तुम ही रख लो...." कहकर वह अपने बूढ़े बैल

को सूखे पेड़ से बाँधकर घर वापिस चला आया।

"क्या हाट में बैल बेच दिया है?" भाइयों ने पूछा।

"हूँ....हूँ....बेच दिया है।" तीसरे भाई ने कहा।

"कितने में बेचा है?" भाइयों ने पूछा।

"बीस रुपये में...." तीसरे ने कहा।

"पैसा कहाँ है?" भाइयों ने पूछा।

"पैसा अभी हाथ में नहीं आया है, कल मिल जायेगा—" तीसरे भाई ने कहा।

"पगला कहीं का...." भाइयों ने डाँटा।

अगले दिन तीसरा भाई जंगल में सूखे पेड़ के पास पहुँचा। वहाँ बैल न था उसे भेड़ियों ने खा लिया था।

"मेरा पैसा कहाँ है?" तीसरे भाई ने पेड़ से पूछा।

हवा में झूमते झूमते पेड़ ने किर किर किया।

"फिर कल? तभी तो मुझे चिढ़ लगती है। खैर, एक और रोज़ मोहलत देता हूँ। अगर तुमने कल पैसा न दिया, तो देखना मैं क्या करता हूँ।" कहकर तीसरा भाई घर चला आया।

"क्या, बैल का पैसा मिल गया है?" भाइयों ने उससे पूछा।

"नहीं, कल मिलेगा।" तीसरे ने कहा।

"आखिर, तुमने बैल किसे बेचा है?" भाइयों ने फिर पूछा।

"जंगल के सूखे पेड़ को।" तीसरे भाई ने कहा।

"पगला कहीं का...." भाइयों ने उसे डाँट बनाई।

तीसरे दिन, तीसरा भाई कुल्हाड़ी लेकर पेड़ के पास गया। "कहाँ है मेरा पैसा?" उसने जोर से पूछा।

पेड़ ने फिर हवा में किर किर किया।

"फिर वही बात?" तीसरे ने कुल्हाड़ी से उसके तने पर एक चोट की। उस चोट से एक टहनी टूटी और कुछ सोना नीचे गिरा।

उस पेड़ के तने में एक खोल था। उसमें चोरों ने बहुत-सा सोना छुपा रखा था। तीसरा, जितना सोना वह ढो सकता था, वह ढोकर घर गया। और उसने वह भाइयों को दिखाया। भाई सोना देखकर चकित हो उठे। "कहाँ से लाये हो इतना सोना?" उन्होंने पूछा।

"जिस पेड़ ने मेरा बैल खरीदा था, उसके तने के एक खोल में यह सब सोना था। तुम भी आओ, ले आयेंगे।" तीसरे भाई ने कहा। तीनों जंगल की ओर भागे। खोल में जितना सोना था, उसके तीन गट्ठर बनाकर एक एक गट्ठर लेकर तीनों घर पहुँचे।

रास्ते में उनको गाँव का मुखिया दिखाई दिया।

"क्या है इन गट्ठरों में?" उसने पूछा।

"कन्द...." भाइयों ने कहा।

"बिल्कुल झूट। इनमें सोना है। चाहो तो देख लो।" कहकर तीसरे नें

अपना गट्ठर खोलकर मुखिया को दिखाया। इतना ढेर-सा सोना देखकर मुखिया हैरान हो उठा। वह तीसरे के गट्ठर में से मुट्ठियाँ भरकर सोना लेने लगा। यह देख तीसरे ने अपनी कुल्हाड़ी से उसके सिर पर एक चोट मारी। उस चोट के कारण मुखिया अपने पुरखों में जा मिला।

"अरे पगले यह तूने क्या किया? अब इस लाश का क्या किया जाय?" भाइयों ने पूछा।

जब और कुछ न सूझा तो वे शव को पास की एक झोंपड़ी में घसीट ले गये। लाश को उसमें गाड़कर वे चले गये। पर उन्होंने सोचा कि उनका पगला भाई जो कुछ हुआ था, वह बता देगा। इसलिए वे दोनों भाई उस दिन रात को उस झोंपड़ी में गये, मुखिया की लाश निकाली। और उसकी जगह एक मरे बकरे को गाड़ दिया। मुखिये की लाश एक और जगह गाड़कर वे घर चले गये। दो तीन दिन बाद गाँव के मुखिया की खोज होने लगी।

तीसरे भाई ने कुछ के पास जाकर कहा—"मैं जानता हूँ, तुम किन्हें खोज रहे हो। मुखिया का क्या हुआ....क्यों नहीं कोई मुझसे पूछता? मैंने ही उसे मार दिया है। मेरे भाइयों ने कहाँ लाश गाड़ी है, आओ मैं दिखाता हूँ।" उसने कहा।

वह लोगों को उस झोंपड़ी के पास ले गया। "यहाँ खोदो, तुम्हें शव मिलेगा।" उसने कहा।

गाँव वालों ने जब वहाँ खोदा, तो वहाँ मरी बकरी मिली।

"पगला कहीं का...." सोचकर गाँव वाले चले गये।

उचित दण्ड

बादशाह अकबर के दरबार में बीरबल के साथ उसका एक बचपन का साथी भी रहा करता था। एक ही समय वे दरबार में आये थे। बीरबल बादशाह का प्रिय हो गया था। इसलिए उसे बीरबल से ईर्ष्या हुई। जैसे भी हो, वह बीरबल का पद हड़पने के लिए मौके की प्रतीक्षा में रहा करता।

बादशाह सदा बीरबल की बुद्धिमत्ता के चमत्कार देखना चाहता था। इसलिए उसने एक छोटी-सी शर्त रखी।

"निरर्थक बातों का कोई गूढ़ार्थ होता है?" बादशाह ने सभा में प्रश्न किया।

तुरत बीरबल ने कहा—"जी हुजूर, होता है।"

बीरबल के मित्र ने तुरत उठकर कहा—"यह झूट है। भला निरर्थक बातों का कैसे गूढ़ार्थ हो सकता है? मैं बहुत-सी निरर्थक बातें कर सकता हूँ।"

बीरबल अपने दोस्त की चाल जान गया उसने उसे सबक सिखाना चाहा। "तुम निरर्थक बातें कुछ कहो। मैं उनका गूढ़ार्थ बताऊँगा।"

बीरबल के दोस्त ने गला सवाँरते हुए कहा—"माँ, बाप से, जो न पैदा हुआ, उसने पीकर पिता को पीटा।"

बीरबल ने एक क्षण सोचकर कहा—"अपने माँ बाप को कोई नहीं पीटता। अगर कोई ऐसा काम करता है, तो कहा जाता है कि वह अपने माँ बाप का लड़का नहीं है और जो पीकर पिता को मारे,

पठान खादर वलीखान

उसके बारे में अगर यह कहा जाय कि वह माँ बाप का पैदा हुआ नहीं है, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है?

बीरबल का साथी यह जवाब सुनकर आश्चर्य में पड़ गया। बीरबल की बात पर जब दरबारी तालियाँ बजा रहे थे, तो वह पगला-सा गया। फिर उसने एक और निरर्थक बात कही।

"बादशाह शिकार के लिए जा रहे थे कि एक पक्षी, जो घोंसले की ओर जा रहा था, बादशाह को देखकर पानी में घुस गया।"

बीरबल ने बिना झिझके कहा—"यह स्वाभाविक है। बादशाह ने उस पर निशाना लगाया। वह नीचे के तालाब में जा गिरा।

फिर दरबारियों ने तालियाँ बजाई। इस बार बीरबल के मित्र ने कहा—"घास जब काफी न रही, तो गधे ने शेर को दुलत्ती मारी। इसमें क्या गूढ़ार्थ है?"

"शेर महाराज है। गधा सेवक है। गधे के लिए अगर घास काफी नहीं है, तो इसका मतलब है कि उसे उसका वेतन आदि काफी नहीं है। इसलिए गधे ने शेर को दुलत्ती मारी। इसमें भी गूढ़ार्थ यह है कि बादशाह शेर है हमारा दोस्त गधा है। उसको अपना वेतन यानि जो कुछ बादशाह दे रहे हैं, काफी नहीं है। इसलिए वह बादशाह को लात मारने की सोच रहा है।" बीरबल ने कहा।

बीरबल के मित्र ने बार बार बादशाह से कहा कि उसका कभी कोई ऐसा ईरादा न था। भरे दरबार में उसका अपमान हुआ। उसी सभा में बादशाह ने बीरबल का सम्मान किया।

काम धन्धा

जयपुर के राजा का जयन्त नाम का एक लड़का था। उसका एक साथी था, जिसका नाम जयपाल था। वे रोज सवेरे घोड़ों पर सवार होकर, पहाड़ो में शिकार के लिए निकल जाते और शाम को लौटा करते। जब वे शिकार पर जाते, तो वे बहुत मामूली कपड़े पहिनते और दोनों के कपड़े एक से होते। देखनेवालों को न मालम होता कि कौन राजा का लड़का था और कौन सेवक।

एक दिन जब जयन्त और जयपाल शिकार करके, थक थकाकर शाम घर जा रहे थे, तो जयन्त को बड़ी जबर्दस्त प्यास लगी। वे गाँव के बाहर के एक कुँये के पास गये। कुँये पर कुछ लड़कियाँ पानी खींच रही थीं। उन्होंने उनसे पानी माँगा। एक लड़की कलश में से एक लोटे में पानी निकालकर देने ही जा रही थी कि एक और लड़की ने उसके हाथ से लोटा ले लिया और पानी फेंक दिया, फिर एक और लोटा भर पानी भरा और उसे भी दूर फेंक दिया। इस तरह छः बार पानी भरा और फेंक दिया। सातवीं बार उसने लोटा भरकर पानी दिया।

जयन्त ने पानी पीकर एक लड़की सें पूछा—"पहिली बार ही तुमने मुझे पानी क्यों न दिया? क्या यूँ मुझे चिढ़ाने के लिए ही किया था?"

"अनजानों को चिढ़ाने की हमारी आदत नहीं है। पानी बहुत ठंड़ा है और आप बहुत गरमाये हुए हैं, इसलिए ही मैंने थोड़ा समय लिया था।"

यशपाल

उसके उत्तर पर जयन्त चकित हो उठा। वह बड़ी सुन्दर भी थी।

"तुम्हारा नाम क्या है?" जयन्त ने उससे पूछा।

"मेरा नाम माधवी है, मेरा पिता गड़रिया है, क्यों आपने यूँ पूछा?" उसने पूछा।

"क्या पूछना नहीं चाहिये? गलती की है।" जयन्त ने चकित होकर पूछा।

"अगर गलती न हो, तो क्यों नहीं यह बताते कि आप कौन हैं और आपका क्या नाम है?" माधवी ने पूछा।

"सच बताऊँ या झूट?" जयन्त ने पूछा।

"जैसा आपका स्वभाव हो, वैसा बताइये।" माधवी ने कहा।

"सच ही बताना चाहिये। पर मैं कौन हूँ। अभी मुझे नहीं बताना चाहिये। पर यह वचन देता हूँ कि बाद में तुम्हें मालूम हो जायेगा।" जयन्त ने कहा।

फिर जयन्त और जयपाल वहाँ से अपने नगर पहुँचे।

जयन्त ने उसी दिन निश्चय कर लिया कि माधवी के सिवाय किसी और से शादी नहीं करेगा। जब उसके माँ बाप जान गये कि उसका निश्चय नहीं बदलेगा, तो वे इस विवाह के लिए मान गये।

राजा के दो आदमी, सगाई के लिए रत्न, आभरण, रेशमी वस्त्र लेकर, जयपाल को साथ लेकर, माधवी के गाँव पहुँचे और उसके पिता गड़रिये से मिले। "राजा तुम्हारी लड़की से, अपने लड़के का विवाह करना चाहते हैं। इस शादी के होने पर, राजा के बाद तुम्हारी लड़की ही महारानी बनेगी।"

आये हुए लोगों को, फल देकर वह करघे पर कालीन बुनने लगी। उसके पिता ने कहा—"इस बारे में मैं कुछ नहीं कह सकती। सब उसी की इच्छा है।" कहकर उसने माधवी को बुलवाया।

वह करघा छोड़कर चली आई।

जयपाल ने उसको सगाई के वस्त्र और आभूषण दिखाये। "राजा ने यह तुम्हारे लिए भेजे हैं?"

उसने उनकी ओर उपेक्षा की दृष्टि से देखा और पूछा—"राजा की मुझ पर इतनी कृपा क्यों हुई है?"

"राजकुमार जयन्त को तुमने एक बार पानी पिलाया था। वह तुम्हें चाहने लगा। उसका तुम्हारे साथ विवाह करने का निश्चय करके, राजा ने तुम्हारे लिए ये हीरे जवाहरात और वस्त्र आदि भेजे हैं?" जयपाल ने कहा।

"तो क्या मैंने उस दिन पानी राजकुमार को दिया था? है तो वह सुन्दर, पर क्या वह कोई पेशा वेशा करता है?" माधवी ने पूछा।

"वह राजा का लड़का है। सब पेशेवाले उसी के सेवक हैं। उस हालत में उसके लिए किसी पेशे की क्या ज़रूरत है?" जयपाल ने पूछा।

"हो सकता है, पर समय क्या नौबत लायेगा, यह किसको मालूम है? आज जो मालिक है, कल वह सेवक हो सकता है। राजा हो, या सेवक, हर किसी को कोई न कोई धन्धा आना चाहिये। राजकुमार मुझे पसन्द है। पर मैं किसी ऐसे से शादी नहीं करूँगी, जो कोई काम धन्धा नहीं जानता हो। ये सब गहने ले जाइये और राजकुमार से कहिये कि मैं माफ़ी चाहती हूँ।" माधवी ने कहा।

राजदूतों ने जाकर जब माधवी की बातें बताईं, तो जयन्त के माँ बाप बड़े खुश हुए। उन्होंने सोचा कि अब उनका लड़का अपने अनुरूप किसी राजकुमारी से ही शादी करेगा।

परन्तु जयन्त ने कहा—"माधवी ने सच कहा है। सब की तरह मुझे भी कोई क़ाम धन्धा सीखना चाहिये।"

राजा ने मन्त्रियों से सलाह मशवरा करके निश्चय किया—"अच्छा हो यदि उसका लड़का जरी से कपड़ा बुनना सीखे।" देश विदेशों से ज़री के निपुणों को बुलाया गया और उन्होने जयन्त को सोने के तागों से चित्र विचित्र कपड़े बुनने सिखाये। कुछ दिनों बाद, उसने एक सुन्दर सोने का वस्त्र बुनकर, उसे जयपाल द्वारा माधवी के पास उपहार में भेजा।

"जो इतना हुनर जानता है, उसे कभी गरीबी नहीं सता सकती। मैं राजकुमार से विवाह करने के लिए तैयार हूँ।" माधवी ने कहा।

जल्दी ही बड़े वैभव के साथ जयन्त और माधवी का विवाह हुआ।

इस विवाह के कुछ समय बाद जयपाल कहीं चला गया। उसको बहुत खोजा गया। पर उसका कहीं पता न लगा।

कुछ समय बाद, राजा वार्धक्य के कारण पके फल की तरह गिर गये, गुज़र गये। जयन्त राजा बना।

एक दिन माधवी ने अपने पति से कहा—"आप होने को तो राजा हैं, पर आपको राज्य के बारे में, या प्रजा के बारे में सचमुच क्या मालूम है? कुछ नहीं मालूम। आपके कर्मचारी आपको यही बताते हैं कि सब बड़ा अच्छा है। पर सम्भव है कि वह बिल्कुल सच न हो।

कभी कभी मेस बदलकर, कभी भिखारी के रूप में, कभी व्यापारी के रूप में, राज्य में घूम घामकर राज्य की परिस्थिति जान लेना अच्छा है।"

"यह तो सच है माधवी। जब मैं मामूली कपड़े पहिनकर शिकार खेलने जाया करता था, तब मैं गाँवों की परिस्थिति जाना करता था। अब मैं राजमहल में कैदी हूँ। अगर मैं चला गया तो राज्य भार कौन उठायेगा?" जयन्त ने कहा।

"मैं उठाऊँगी। फिक्र न कीजिये। किसी को यह भी न मालूम होने दिया जायेगा कि आप राजमहल में नहीं है।" माधवी ने कहा।

जयन्त एक गरीब किसान का वेष धारण करके, राज्य भर में घूमने के लिए निकल पड़ा। वह शक्तिपाद नामक नगर में पहुँचे। जब वह एक चबूतरे पर बैठा था, तो वहाँ एक वृद्ध आया। उस वृद्ध के साथ बहुत-से शिष्य थे, उसके सामने कुछ नौकर कहते जा रहे थे "हटो....हटो।" और कई उस वृद्ध की चरण धूलि उठा रहे थे।

"कौन से स्वामी हैं ये?" जयन्त ने अपने पास खड़े एक आदमी से पूछा।

"इतने बड़े आदमी को भी तुम नहीं जानते? शक्ति आलय का बड़े पुजारी हैं। महात्मा हैं। पैर के नीचे कहीं कीड़े-मकोड़े न कुचल कुचला जायें, वे नीचे नहीं चलते हैं। उन्हें शक्तियोगी कहते हैं।" उस आदमी ने कहा।

शक्तियोगी चबूतरे के पास आया, नौकरों द्वारा बिछाये गये रत्नकम्बल पर वह विश्राम करने लगा। लोगों ने उसको घेर लिया वे उसके सामने साष्टान्ग करने लगे।

जयन्त भी उन आदमियों को धकेलता सामने गया। शक्तियोगी जान गया कि

तब शक्तियोगी ने खड़े होकर उसे देखने आये हुए लोगों को आशीर्वाद दिया। अपने शिष्यों को और माल ढोनेवालों को अपने साथ ले गया। जयन्त भी उनके साथ गया। कुछ देर बाद नगर पार करके, एक ऊँचे प्राकार वाली जगह पर गये। उस प्राकार में एक बड़ा द्वार था। शक्तियोगी ने एक बड़ी चाबी से उसके द्वार खोले।

अन्दर....प्राकार के अन्दर एक मन्दिर था। उसके चारों ओर कमरे थे। कुलियों ने वह माल मन्दिर के सामने नीचे उतारा। शक्तियोगी उन कुलियों को और जयन्त को

वह कोई वहाँ नया आदमी था। "तुम कौन हो भाई? तुम क्या काम करते हो?"

"मैं दूर देश का हूँ। मैं काम की तलाश में इधर उधर घूम रहा हूँ।" जयन्त ने कहा।

"काम ही न? मैं दिलवाऊँगा। मेरे साथ आओ।" शक्तियोगी ने कहा। जयन्त ने सिर हिलाकर यूँ दिखाया जैसे वह मान गया हो। शक्तियोगी ने अपने शिष्यों के कान में कुछ कहा। वे तुरत गये और कुलियों द्वारा कुछ माल ढ़ोकर वहाँ वापिस आये।

मन्दिर के पीछे के भाग में ले गया। एक लोहे का फाटक उसने खोला। "तुम सब अन्दर जाओ। तुमको क्या क्या करना है, मैं बताऊँगा।" उनके अन्दर जाते ही, शक्तियोगी ने बाहर से फाटक बन्द कर दिया और ताला लगा दिया।

अन्दर अन्धेरा था, रास्ता नीचे की ओर जाता था....इस प्रकार कुछ देर तक जमीन में नदी के ढ़लान पर जाने के बाद दूरी पर उनको एक टिमटिमाता दीप दिखाई दिया। उसी समय एक काली आकृति रास्ता रोककर खड़ी हो गई।

"यह सोने से सौ गुना अधिक तो है ही और जो अच्छे काम के पारखी हैं, वे दो सौ गुना अधिक देंगे। सिवाय रानी माधवी देवी के ऐसे पारखी कहाँ हैं?" जयन्त ने पुजारी से कहा।

पुजारी को लालच पैदा हुआ। उस दुष्ट ने निश्चय किया कि बिना और पुजारियों को बताये वह उसे स्वयं रानी के पास ले जायेगा और जो कुछ लाभ मिलेगा, वह स्वयं हथिया लेगा, किसी को कुछ न देगा। उसने वह दुशाला बड़े पुजारी को भी नहीं दिखाया। वह, जयपुर की ओर निकल पड़ा।

जब नौकरों ने बताया कि उसके लिए कोई अमूल्य जरी का वस्त्र लाया था, तो माधवी ने पुजारी को अन्दर आने दिया।

उसने पुजारी के लाये हुए दुशाले को खोलकर न देखा। पूछा—"इसकी क्या कीमत है?"

"महारानी, सोने से तीन सौ गुना अधिक। अगर आपने काम देखा, तो आप इसकी कीमत जान जायेंगे। काम जान सकेंगे इसीलिए ही मैं आपको खोजता इतनी दूर आया हूँ।" पुजारी ने कहा।

माधवी ने बिना विश्वास किये ही दुशाला खोला। तुरत उसकी नज़र में वह सन्देश आया, जिसे उसके पति ने उसके लिए बुना था।

"प्रिय माधवी। मैं नरक में फँस गया हूँ। यह कपड़ा जो तुम्हारे पास ला रहा है, वह वहाँ के यम किंकरों में से है। जयपाल भी यहीं है। शक्तिपाद के पूर्व में, प्राकारों के बीच, भूमि की गुफाओं में हमारी खोज करवाना। अगर तुमने मदद न की तो हम सब मर मरा जायेंगे।—जयन्त"

माधवी को मानों यह सन्देश देख काठ मार गया। वह काफी देर तक यूँ देखती रही जैसे वह उस दुशाले की कारीगरी की तारीफ़ कर रही हो, फिर अपने को सम्भलकर आखिर उसने कहा—"जैसे तुमने कहा है, इसकी कीमत बिठाना सम्भव नहीं है। आधा राज्य भी दे दिया जाये तो भी नुक्सान नहीं है। जितना तुमने माँगा है, उससे अधिक ही दूँगी।" कहते हुए उसने अपने मन्त्री के नाम एक पत्र लिखा। उसे नौकर के हाथ में देते हुए कहा—"इसे और इस आदमी को, मन्त्री को सौंप दो।"

पुजारी नौकर के साथ गया। मन्त्री ने माधवी का पत्र पढ़कर, तुरत पुजारी के हाथ पर बँधवाकर जेल में डलवा दिया।

फिर माधवी ने एक बड़ी सेना को साथ लेकर, शक्तिपाद के पूर्व के मन्दिर पर आक्रमण किया। द्वारों को तोड़कर अन्दर गई। सब पुजारी पकड़े गये। कैदियों को मुक्त कर दिया गया।

तब जयपाल ने जयन्त को पहिचाना। उसने जयन्त से कहा—"आज माधवी देवी ने हमारे प्राणों की रक्षा की है।

"पगले! मेरी प्राणों की रक्षा तो उसने उस दिन ही की थी, जब उसने मुझे काम धन्धा सीखने के लिए कहा।" जयन्त ने कहा था।

फिर जयन्त अपनी मन्त्री और जयपाल को साथ लेकर राजधानी वापिस गया। शक्तियोगि जैसे दुष्टों को पकड़वाकर वह मरवाता रहा और अच्छे ढ़ंग से बहुत दिनों तक राज्य करता रहा।
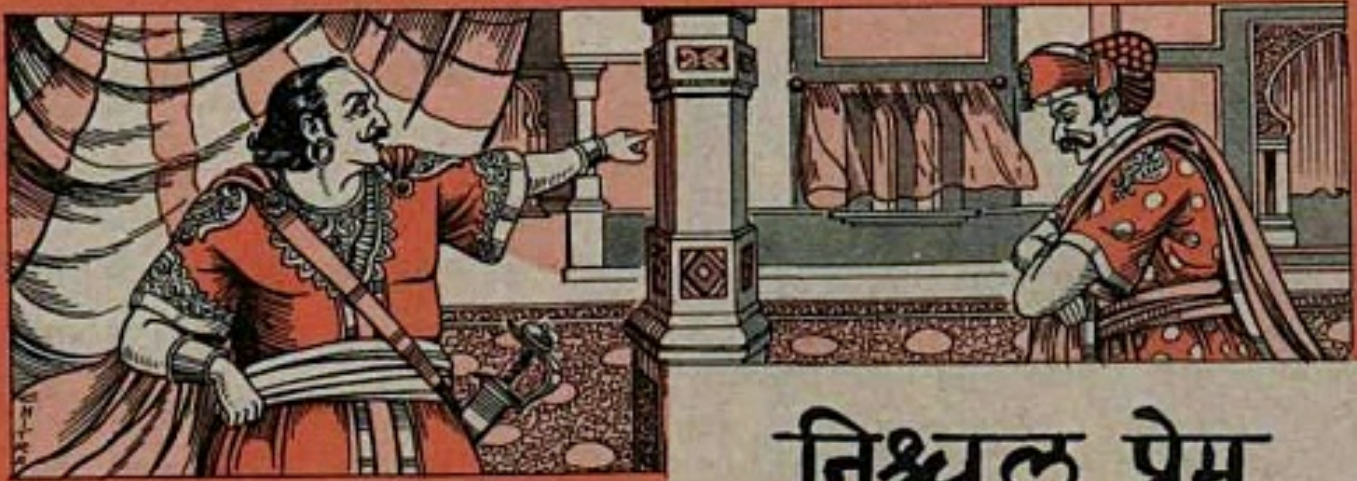
निश्चल प्रेम

विक्रमपुर राजा के एक ही लड़का था, उसका नाम धीरमति था। वह उदार, शान्त, सम्पन्न, सकल सद्गुण सम्पन्न था। परन्तु क्षत्रियोचित युद्धासक्ति, अस्त्र कौशल आदि उसमें न थे।

उसकी प्रियतमा का नाम मंजरी था। वह विक्रमपुरी के राजा के सामन्त की लड़की थी। वह जब छोटी थी, तो सामन्त ने उसकी चोर-डाकुओं से रक्षा की थी और तब से उसकी वह अपनी लड़की की तरह पालन-पोषण करता आया था। उसको सौभाग्य के कारण युवराज ने उससे प्रेम किया था और वह युवराज से प्रेम करती थी।

राजा को यह गँवारा न था कि उसका लड़का ऐरे गैरे से प्रेम करे। परन्तु धीरमति ने साफ साफ कहा—"यदि मैं मंजरी से शादी न कर सका, तो मैं शादी ही नहीं करूँगा।"

राजा को गुस्सा आ गया। उसने सामन्त को बुलाकर कहा—"आप अपनी लड़की को कहीं और भेज दीजिये। अगर उस लड़की का मुँह दिखाई दिया तो मैं उसे जलवा दूँगा।"

सामन्त डर गया। उसने अपनी लड़की अपने घर के एक काली कोठरी में बन्द कर दी और उसकी देखभाल करने के लिए एक बुढ़िया को नियुक्त किया।

मंजरी दिखाई न दी। धीरमति ने जब सामन्त के घर जाकर उससे मंजरी के बारे में पूछा, तो उसने कहा—"महाराज ने बड़ी पाबन्दियाँ लगा दी हैं....उन्होंने

रामचन्द्र

कहा है कि तुम दोनों को एक दूसरों को देखना नहीं चाहिए।"

धीरमति घर वापिस चला गया। रहने लगा। इतने में विक्रमपुर के किले पर पास के केशवपुर के राजा ने आक्रमण किया। विक्रमपुर के राजा ने अपने लड़के के पास जाकर कहा—"उधर शत्रु ने आक्रमण किया है, उनको भगाना तो दूर, तुम इधर पड़े पड़े यूँ कराह रहे हो।"

"जब मैं मंजरी से शादी नहीं कर सकता हूँ, तो उस हालत में अगर नगर भाड़ में जाता है, तो मुझे क्या?" धीरमति ने कहा।

"तुम्हारे किसी ऐरी गैरी लड़की से शादी करने से तो यही अच्छा है कि नगर खाक हो जाये।" राजा ने गुस्से में कहा। वह जब जाने लगा तो धीरमति को एक ख्याल आया। उसने अपने पिता से कहा—"मैं एक शर्त पर युद्ध करूँगा। युद्ध से वापिस आने के बाद मुझे मंजरी से एक बार मिलकर बात करने दिया जाये।" राजा इसके लिए मान गया।

धीरमति बड़ा खुश हुआ। उसने झट कवच धारण किया। कमर में तलवार बाँधी, भाला और ढ़ाल लेकर घोड़े पर सवार होकर वह तेज़ी से निकला। उसने बाकी सेना की परवाह न की। वह अपनी सेना से बहुत दूर निकल पड़ा। शत्रुओं ने उसके घोड़े को रोका। उसे कैदी बना लिया। उसके हाथ से भाला, ढ़ाल आदि ले ली और उसे ले जाकर, शत्रु राजा के सामने पेश किया।

धीरमति को जो मंजरी को देखने के सपने देख रहा था, अपने को शत्रु डेरे में कैदी बना देख बड़ा आश्चर्य हुआ।

जयन्त ने उस आकृति को पास से देखा, कोई अस्थिपंजर-सा पुरुष था।

"मेरे साथ आओ, सब दिखाऊँगा।" कहता, वह आदमी नये आये हुए लोगों को भूमि में अलग अलग गुफाओं में ले गया। उन्हें देखते ही, जयन्त को नरक याद हो आया। एक गुफा में कितने ही मर मरा रहे थे। एक और गुफा में कितने ही अलग अलग काम कर रहे थे। सभी मरने को तैयार थे।

उस अस्थिपंजर जैसे मनुष्य ने इस प्रकार कहा।

"वह राक्षस पुजारी, हमें भी, जैसा कि तुम्हें धोखा दिया है, धोखा देकर यहाँ लाया था। मैं यहाँ कितने सालों से हूँ, यह मैं नहीं जानता हूँ। मेरे साथ जो आये थे, वे सब मर मरा गये हैं। ये राक्षस ऐसे आदमी लाते हैं, जो काम जानते हैं और नहीं भी जानते हैं। जो काम जानते हैं, उन्हें काम करवाकर मार देते हैं। दूसरों को काटकर मार देते हैं। सबको पकाकर खा जाते हैं। ये नरभक्षक हैं, पिशाच हैं। बड़े पुजारी के बाकी पुजारी साथी हैं।

उससे बात करते ही जयन्त ने उसको पहिचान लिया, वह जयपाल ही था। कहीं आश्चर्य के कारण उसका दिल थम न जाये, उसने उसे नहीं बताया कि वह कौन था।

इतने में किसी के आने की आहट हुई। एक पुजारी कुछ हथियारबन्द लोगों को साथ लेकर वहाँ आया। "क्या तुम ही हो जो अभी अभी आये हो?" उन्होंने पूछा।

"हाँ....धर्मप्रभु!" जयन्त ने कहा।

"तुम में से कौन ऐसे हैं, जो कोई काम धन्धा करते हैं।" पुजारी ने पूछा।

"हम सब कर सकते हैं। हम जरी के कपड़े बुन सकते हैं, उनकी कीमत सोने से सौ गुना होती है।" जयन्त ने कहा।

"सच?" पुजारी ने पूछा।

"आप खुद देख लेना।" जयन्त ने कहा।

"तुम्हें क्या औजार चाहिए? क्या माल चाहिए?"

जयन्त ने जवाब देकर कहा—"हम माँस नहीं खाते। हमें मेहरबानी करके शाकाहार दीजिये।"

पुजारी ने जाकर उनके लिए भोजन भेजा। जयन्त ने वह खाना, अपने साथ आये हुए लोगों को तो दिया ही, जयपाल को और गुफाओं में और रहनेवालों को भी दिया।

पुजारी ने जो चीज़ें भेजीं उससे उसने अद्भुत दुशाला बुना। उसमें उसने वहाँ के दृश्यों के चित्र तो बनाये ही उसमें एक सन्देश भी बुना। सब उसको आसानी से नहीं पढ़ सकते थे।

पुजारी आया। उसने उस अद्भुत दुशाले को देखा और उसकी प्रशंसा की।

“यह विक्रमपुर के युवराज हैं! इनका गला कटवा दो।” शत्रु राजा ने कहा।

यह सुनते ही धीरमति को जोश आ गया। उसने झट अपनी तलवार निकाली, उन सैनिकों से जिन्होंने उसे पकड़ रखा था, वह लड़ा। शत्रु के डेरे से निकलकर वह अपने किले की ओर भागने लगा।

हाथ लगा शत्रु को भाग जाता देख, शत्रु राजा ने घोड़े पर उसका पीछा किया। धीरमति ने शत्रु राजा को घोड़े पर से घसीटा, उसे कैदी बनाकर, उसे खींचता अपने किले पहुँचा। युद्ध समाप्त हो गया। शत्रु राजा को कैदी बना लिया गया।

“मैंने आपका काम पूरा कर दिया है, अब आप अपना वचन पूरा कीजिये और मुझे मंजरी से मिलने दीजिये।” धीरमति ने अपने पिता से कहा।

“इस तरह के वचनों के निभाने की कोई आवश्यकता नहीं है।” पिता ने कहा।

तुरत धीरमति ने शत्रु राजा के बन्धन तोड़ दिये। उसे एक घोड़ा दिया। “जाओ भाई, जाओ....जान लो कि न तुम मिले, न मैंने तुमको कैद ही किया।”

राजा को अपने लड़के पर बड़ा गुस्सा आया। उसने उसको अन्धेरी कोठरी में डाल दिया।

यह बात सारे नगर में फैल गई। मंजरी ने उस शहर को छोड़कर जाने का निश्चय किया। अन्धेरी रात में काला कपड़ा ओढ़कर बिना किसी से कहे वह कहीं चली गई। वह नगर से निकलकर जंगल में चली गई और पौधों के बीच में लेटकर सो गई। जब वह उठी तो उसे गड़रिये दिखाई दिये। “क्यों भाई, क्या रोज़ तुम इस तरफ आते रहते हो? अगर

आते हो तो जब इस देश के युवराज शिकार के लिए आयें तो उनसे कहना कि अगर वे इस तरफ आयें तो उनको अच्छा शिकार मिलेगा।"

गड़रिये लड़के यह करने के लिए मान गये। मंजरी जंगल में चली गई। वहाँ एक झोंपड़ी बनाकर उसमें रहती, युवराज की प्रतीक्षा करने लगी।

अपनी गोद ली हुई लड़की मंजरी को चला गया देख, सामन्त ने महाराज के पास जाकर कहा—"महाराज! आप क्यों युवराज को निष्कारण कैदी बनाये हुए हैं? मंजरी यह देश छोड़कर चली गई है। वह युवराज को नहीं दिखाई दे सकती।

राजा ने युवराज को कैद से छोड़ दिया। वह घोड़े पर सवार होकर, नगर के बाहर जंगल की ओर जाने लगा। उसे कुछ गड़रिये मिले। उन्होंने उससे पूछा—"क्या आप ही युवराज हैं? अगर हैं तो इस जंगल की देवी ने हमें आप से कहने के लिए कहा है कि अगर आप इधर गये तो आपको अच्छा शिकार मिलेगा।"

धीरमति यह सोच कि यह बात मंजरी ने ही कहलवाई थी, वह गड़रियों की बताई दिशा की ओर चल दिया। वह जल्दी ही उसकी झोपड़ी के पास पहुँचा।

बहुत दिनों बाद वे दोनों मिले थे। इसलिए वे बड़े खुश हुए। परन्तु उनका उस जंगल में रहना खतरनाक था। "अगर आपके पिता के लोग आपको खोजते यहाँ आये और अगर उन्होंने मुझे देखा, तो जीते जी मुझे जला देंगे।" मंजरी ने कहा।

अगले दिन सवेरे, मंजरी को घोड़े पर सवार करके, धीरमति समुद्र तट की ओर निकल पड़ा। उन्हें सौभाग्यवश गजद्वीप की ओर जाती एक नाव दिखाई दी। वे

वे उस पर सवार होकर गजद्वीप गये। वहाँ उन दोनों ने राजा का आतिथ्य पाकर कुछ समय आराम से काटा।

इतने में व्याघ्रद्वीप का राजा नौकाओं में अपने सैनिकों को लेकर आया और उसने गजद्वीप को लूटा। उन्होंने जितना धन, जिसको जहाँ मिला, उतना बटोरा। और जितने आदमी मिले उतने बटोरकर वे अपनी नौकाओं में पहुँचे। मंजरी और धीरमति भी उनमें शामिल थे। इस तरह जो उनको मिलते थे, वे उन्हें गुलाम बना लिया करते थे।

सैनिकों ने मंजरी को उपहार के रूप में राजा को समर्पित किया और उसे उसकी नौका में सवार कर दिया। नौकायें गजद्वीप से व्याघ्रद्वीप जा रही थीं कि तूफान आया और धीरमति की नौका और नौकाओं से दूर हो गई। विक्रमपुर के पास के पहाड़ियों से टकरा गई और टुकड़े टुकड़े हो गई।

धीरमति जान गया कि कुछ दिन पहिले ही उसका पिता गुज़र गया था और जोर शोर से उसकी खोज की जा रही थी। वह जल्दी जल्दी अपने नगर गया और उसने अपना पट्टाभिषेक करवा लिया।
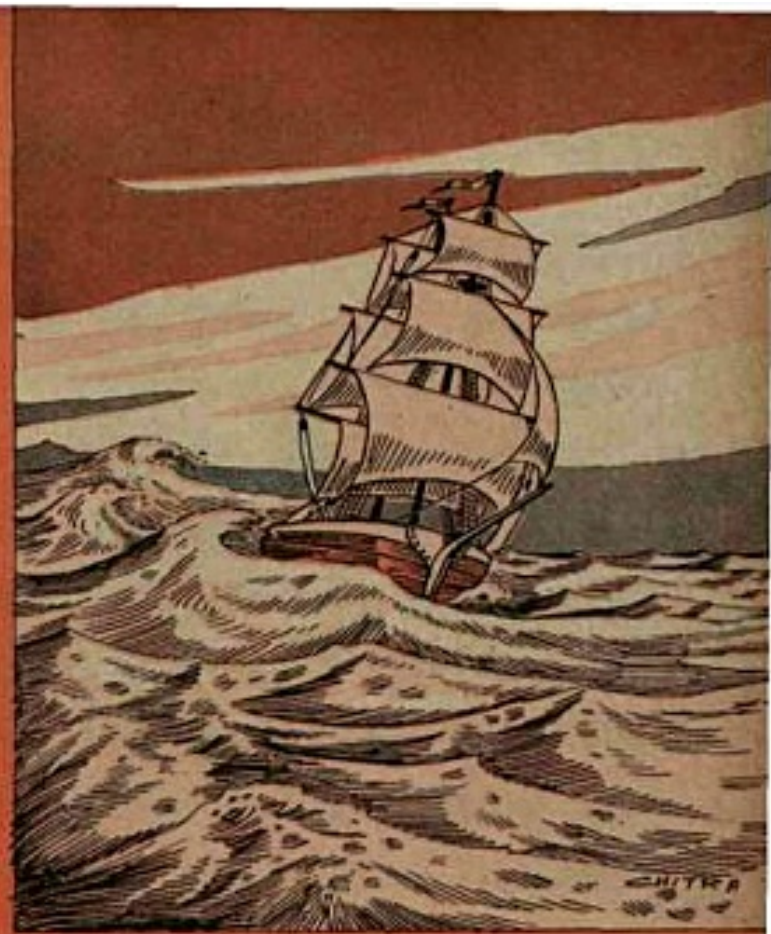
सच यह था कि मंजरी भी अपने देश पहुँच गई थी। जब उसकी नौका व्याघ्रद्वीप के पास पहुँची तो उसने कहा—"यह सब जगह तो मुझे मालूम है।"

यह देख जब व्याघ्रद्वीप राजा ने उसके बारे में पूछा ताछा, तो उसे पता लगा कि मंजरी उसकी ही लड़की थी। उसे पन्द्रह साल पहिले समुद्री डाकू उठा ले गये थे, उन्हीं से ही सामन्त ने उसकी रक्षा की थी। चूँकि उसकी खोई हुई लड़की उसे फिर मिल गई थी। इसलिए व्याघ्रद्वीप के राजा ने बड़े पैमाने पर

उत्सव किये। उसकी शादी के बारे में अपनी पत्नी और मन्त्रियों से सलाह मशवरा करने लगा।

मंजरी को इस बात की खुशी न थी कि उसके माँ बाप उसे मिल गये थे। उसे सिवाय इस दुःख के कि धीरमति कहाँ चला गया था और कुछ न सूझता था। इसलिए उसने एक दिन पुरुष वेष धारण किया, बिना किसी को कहे निकल पड़ी, व्यापारियों की नौकाओं में एक द्वीप से दूसरे द्वीप जाती, अपने प्रेम का एक गीत बनाकर, चलती चलती विक्रमपुर पहुँची।

उस देश में पहुँचते ही उसे पता लगा कि धीरमति वहाँ का राजा था। जैसे भी हो, वह राजा के दर्शन करने गई और उसने उसको अपना प्रेम गीत सुनाया। धीरमति जान गया कि वह उसका अपना ही प्रेम गीत था। उसने हैरान होकर पूछा—"आखिर मंजरी का क्या हुआ? किससे उसका विवाह हुआ?"

"मंजरी भला कैसे विवाह करती? किसी और से क्यों शादी करती?" पुरुष वेष में मंजरी ने कहा।

"तो वह अपने प्रियतम के पास क्यों नहीं जाती? वह भी भला किसी और से कैसे शादी करेगा?" धीरमति ने दुःखी होकर कहा।

"इसलिए ही मंजरी अपने प्रियतम को खोजती, समुद्र पार करके आई है। मैं ही मंजरी हूँ।" मंजरी ने कहा।

धीरमति के आनन्द की सीमा न थी। उसने तुरत अपने विवाह की व्यवस्था की। उसे अपनी रानी बनाकर वह बहुत समय तक राज्य करता सुख से रहा।

कृष्णावतार

कृष्ण जब युवक हुआ, तो उसके सौन्दर्य और शक्ति पर गाँव की सुन्दरियाँ मुग्ध होने लगीं। जब वह बाँसुरी बजाता, तो वे सुधबुध खो बैठतीं। माँ, बाप, पति, बन्धुओं के कहने पर भी, उसकी बाँसुरी सुनते ही, झुण्डों में वे उसके पास चली जातीं। उसके साथ, जहाँ मर्जी वे घूमा करतीं। स्त्रियों को लेकर, कृष्ण नाचा करता और गाया करता। आँख मिचौनी खेला करता। वह दिन रात उन्ही के साथ समय बिता दिया करता।

एक दिन आधी रात को, जब वह गोपिकाओं के साथ नाच रहा था, तो अरिस्ट नाम का राक्षस एक बलवान साँड़ के रूप में कृष्ण को मारने के लिए आया।

साँड़ को देखकर उसकी भयंकर आवाज़ सुनकर गोपिकायें डर गयीं और कृष्ण की आड़ में जा छुपीं।

उसने गोपिकाओं को समझाया कि वे डरे न और साँड़ के दोनों सींग उसने जोर से पकड़ लिये। उसे हिलने न दिया, उसका गला मोड़ दिया और उसे एक धक्का दिया।

उसके मुख से खून निकलने लगा, वह मरकर गिर गया। तब गोपिकायें सम्भलीं

हल ढूँढ़ निकालते हो और आप सब मेरी सहायता भी करना चाहते हैं। फिर भी न मालूम क्यों, आप मुझे एक बड़ी आफ़त में फंसा देखकर भी चुप हैं। नन्द गोप का लड़का मुझे मारने के लिए तैयार है। वह दिन रात इस तरह बड़ा हो रहा है, जैसे कि मेघ वायु को अनुकूल होकर बड़ा होता है। या विष वृक्ष बढ़ता है। वह किस तरह पैदा हुआ है, बहुत सोचने पर भी मैं नहीं सोच पाता हूँ। उसका सारा जीवन असाधारण-सा जान पड़ता है। सुनिये, मैं सुनाता हूँ।"

और कृष्ण को घेरकर उसकी प्रशंसा करने लगीं।

कृष्ण इधर इस तरह आनन्द कर रहा था और उधर कंस रोज मौत मर रहा था। वह बड़ा चिन्तित था। दुर्बल हो गया था।

एक बार उसने अपने सभा भवन में उग्रसेन, वसुदेव, सत्यक, अन्धक, कम्पक, दारुक, विभृथ, बभ्रु और यदु और पाँच प्रमुखों को बुलाकर इस प्रकार कहा।

"आप सब बड़े बुद्धिमान हो। ज्ञानी हो। कठिन से कठिन समस्या का भी

कंस ने कृष्ण के कारनामों के बारे में सविवरण बताया। अभी उसकी आँखें ठीक तरह खुली भी न थीं कि उसने पूतना को मारा। वह ठीक तरह लेट भी न पाता था कि उसने गाड़ी को लात मारकर उलट दिया। उसके टुकड़े टुकड़े कर दिये और जब वह मुश्किल से चल पाता था, तभी उसने ओखल बाँधकर यों बड़े बड़े पेड़ों को उखाड़ दिया था और क्या बताऊँ? फिर उसने काली को मार दिया, फिर पुलम्ब और धेनुक को मारा। अरिष्ट को भी उसने मार दिया। बच्चों की बात छोड़ो।

बड़े भी ऐसे काम नहीं करते। जब सात दिन तक जोर से वर्षा होती रही, तो उसने एक पहाड़ को छाते की तरह उठा दिया। यह एक असाधारण काम ही काफ़ी है और कहने की क्या ज़रूरत है?

यह सब कहकर कंस ने फिर कहा—"अब एक केशी राक्षस ही बाकी रह गया है। अगर केशी भी कृष्ण के हाथ मारा गया, तो उसके बाद मेरा ही नम्बर आता है। जिसे मारने का चस्का पड़ गया है, क्या वह मुझे छोड़ेगा? नहीं। और ऊपर से, उसके जितना ही बलवान, उसका भाई बलराम भी उसके साथ है। वास्तव में क्या हुआ है, नारद ने पहिले ही इस बारे में मुझे बता दिया है। देवकी देवी ने आधी रात के समय एक लड़के को जन्म दिया। यह वसुदेव उसको ले जाकर, नन्द गोप को पत्नी के बगल में रख आया और उसकी लड़की को उठा लाकर, अपनी पत्नी के पास रख दिया वह भी मेरे हाथ में नहीं पड़ी। वह भी आकाश में जा उड़ी और विन्ध्यावासिनी देवी बन गयी। वासुदेव यद्यपि मेरा सम्बन्धी है, तो भी वह मुझे धोखा देता रहा। मैंने उसकी इतनी खातिरदारी की और उसने मुझे यूँ दगा दिया।

फिर वसुदेव की ओर मुड़कर, कंस ने कहा—"मैं तुम्हारी चाल समझता हूँ। तुम अपने लड़के से मुझे मरवाकर, मथुरा का राजा बनना चाहते हो। पर तुम एक बात नहीं जानते। इन्द्र भी अगर आ जाये, तो भी वह मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। तुमने यही गलती की है। सम्राट के घर पैदा हुए हो। छुटपन से, तुम मेरे घर बड़ा हुए। मेरी बहिन से शादी करके, यादवों के लिए गुरु बने।

और तुमने यह कमीना काम किया? तुम ही अपने पाप का फल भुगतो। मैं तुम्हें नहीं मारूँगा। बन्धु, मित्र और ब्राह्मण की हत्या मैंने नहीं की है, न करूँगा ही। तुम्हें यहाँ से हटाया जा सकता है, मैं वह भी नहीं करूँगा। अगर तुम जाना चाहो, तो चले जाओ और रहना चाहो, तो रहो।"

फिर कंस ने पाँचवंश के अक्रूर की ओर मुड़कर कहा—"मैं दस वर्ष, अपनी धनुष का, एक बड़ा उत्सव मनाने जा रहा हूँ। उसमें, दूर दूर से राजा आयेंगे। बहुत दिन तक दावत देनी होगी। गोकुल से दूध, दही और शहद लाना होगा। इसलिए तुम गोकुल जाओ और कहो कि ये सब यहाँ भेजी जायें। वापिस आते समय नन्द गोप और उसके कुटुम्ब को साथ लेते आना। मैं अपने भतीजे बलराम कृष्ण को भी देखना चाहता हूँ। सुनता हूँ कि वे बड़े बलशाली हैं। तुम उनको अच्छी तरह विश्वास दिलाना कि मैं सचमुच उनको देखना चाहता हूँ। उनको साथ लाना। मेरे पास बड़े अच्छे पहलवान हैं। पहलवानों को उनसे लड़ाऊँगा और देखूँगा कि उनमें कौन बलवान हैं। अगर तुम उनको ले आये, तो मेरा बड़ा उपकार करोगे। शायद वसुदेव कुछ कहे, पर तुम उनकी न सुनना, तुम तुरत जाओ।"

कंस के परिवार में बहुत से ऐसे लोग थे, जो कृष्ण को भगवान का अवतार मानते थे। उनमें अक्रूर भी एक था, वह मन ही मन बड़ा खुश था कि उसे कृष्ण के दर्शन का अवसर मिल रहा था। अक्रूर ने कंस से विदा ली और झट रथ पर सवार होकर निकल पड़ा।

कंस का, वसुदेव के बारे में इस तरह बात करना वहाँ उपस्थित लोगों को बड़ा बुरा मालूम हुआ। उनमें से वृद्ध अन्धक नाम के यादव ने निर्भय हो सामने आकर कहा।

"जो बातें तुमने कही हैं, एक राजा को नहीं सोहतीं। बिना आगे पीछे सोचो, तुमने एक बड़े आदमी के बारे में ऊटपटाँग बातें कही हैं। इस प्रकार के व्यवहार से तुमने अपने माँ बाप और अपने वंश पर बड़ा कलंक लगाया है। तुम यह सोचकर गलती कर रहे हो कि वसुदेव अपने लड़के को छुपा आया है। क्या माँ बाप अपनी सन्तान की रक्षा के लिए इधर उधर के सब कष्ट नहीं झेलते हैं? क्या तुम बिना माँ बाप के कष्ट झेले ही इतने बड़े हो गये हो? हमें तुम्हारा यह रुख बिल्कुल पसन्द नहीं है। तुमसे हम अपना सम्बन्ध तोड़कर अगर नहीं गये हैं, तो गलती हमारी ही है। हम से यह अक्रूर ही बड़ा भाग्यशाली है। कृष्ण को देखकर जब अक्रूर आयेगा, तो उसे देखकर हम भी धन्य हो जायेंगे। कृष्ण अगर यहाँ आया, तो तुम अवश्य मारे जाओगे। इसलिए इससे पहिले तुम गोकुल जाओ, कृष्ण से मिलो और उससे मेल-मिलाप करके, अपना लाभ करो।"

अन्धक के इस प्रकार कहने पर कंस को बड़ा गुस्सा आया और वह उठकर चला गया। बाकी लोग भी अपनें घर चले गये।

अक्रूर अभी गोकुल पहुँचा भी न था कि कंस ने केशी नाम के राक्षस को वृन्दावन भेजा। घोड़े के रूप में वह राक्षस वृन्दावन पहुँचा। वहाँ जंगल में चरते पशु और गौव्वें चरानेवालों को मारने

लगा। उस भयंकर घोड़े को देखकर, गोकुल घबरा उठे। वह घोड़ा पशुओं का माँस काटकर खाता। उनका खून पीता। जंगल के जानवर खा पीकर, वह गोपकों के निवास स्थल के पास आया। उसे कुछ दूरी पर ही देखकर गोपक कृष्ण के पास भागे। कृष्ण ने उनको न डरने के लिए कहकर, घोड़े को ललकारा।

उसे यूँ ललकारता देख, घोड़े को जोश आ गया। जब उसने देखा कि कृष्ण के हाथ में कोई हथियार न था, तो उसका जोश दुगना हो गया। वह मुख खोलकर, बड़े बड़े दान्त निकालकर जोर से हिनहिनाता कृष्ण की ओर लपका। वह पिछले पैरों पर खड़ा होकर, आगे के पैरों से कृष्ण पर हमला करने को था कि कृष्ण एक तरफ़ हट गया और झट उसने अपना हाथ घोड़े के मुख में घुसेड़ दिया और उसकी जीभ बाहर खींच दी। तुरत घोड़ा सम्भल गया। वह कृष्ण की चोट न सह सका। न वह उसको काट ही सका। कुछ भी न बिगाड़ सका, वह पैर पीटता असहाय-सा खड़ा हो गया। कृष्ण ने उसकी जीभ फाड़ दी। गरदन तोड़ दी। दान्त निकाल दिये। पेट चीर दिया और उसको मार दिया।

गोकुलवालों ने राहत की साँस ली। सबने मिलकर कृष्ण का अभिनन्दन किया। गोपिकायें भागी भागी गईं और फूल की मालायें लाकर उसको पहिनाईं।

तब नारद ने अदृश्य होकर, आकाश से अपना नाम बताकर कृष्ण से क़हा—"मैं कलहप्रिय हूँ और तुम्हारे युद्ध को देखने के लिए ही मैं देव लोक से चला आ रहा हूँ। तुमने जो पराक्रम दिखाया है, वह इन्द्र ही दिखा सकता है। शिव
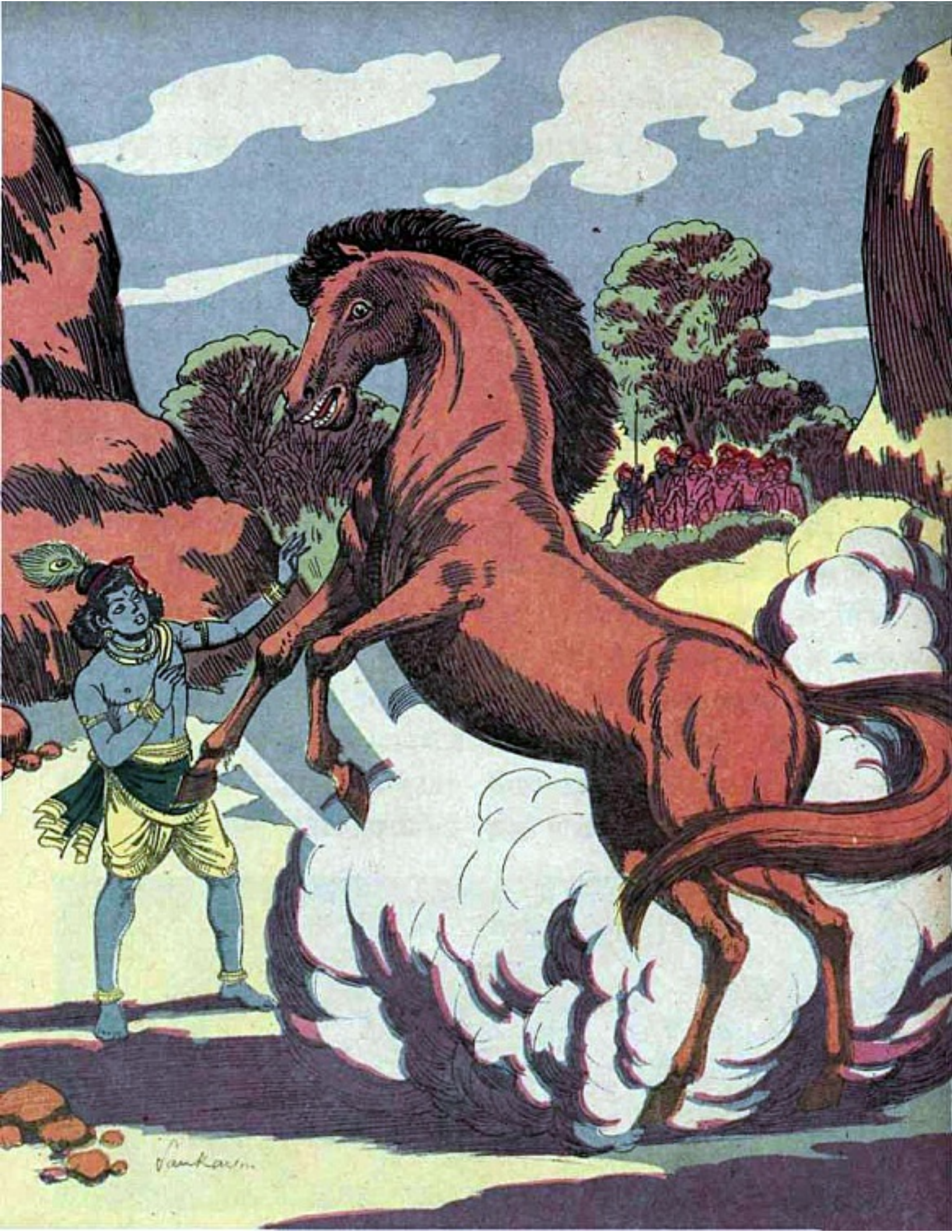
दिखा सकता है और कोई नहीं दिखा सकता। उस केशी को, जिसका मुकाबला इन्द्र भी आसानी से नहीं कर सकता था, तुमने आसानी से मार दिया है। क्योंकि तुमने इसे मारा है, तुम केशव के नाम से जगत में प्रसिद्ध होगे।" यह कहकर वह चला गया।

इस बीच अक्रूर, रथ में जिसमें सुन्दर घोड़े जुते हुए थे, सीधे मथुरा से बिना कहीं रुके वहाँ पहुँचा। तब सूर्यास्त हो चुका था। अन्धेरा बढ़ रहा था और अन्धेरे को चीरता चन्द्रमा निकल रहा था। गोकुल में रौनक थी। जहाँ देखो, वहाँ गौव्वें थीं। गोपक उनको उनके नामों से बुला रहे थे। दूध निकालने की ध्वनि भी सुनाई पड़ रही थी। अक्रूर रथ में आया....और कुछ दूरी पर बलराम कृष्ण को देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। वह कृष्ण के पास पहुँचा। अपना नाम और गोत्र बताया और उसने कृष्ण के पैर छुये। कृष्ण ने उठकर उसका आलिंगन किया। कुशल प्रश्न किये और बलराम के साथ उसे अपने घर ले गया।

अक्रूर की इच्छा पर नन्द गोप आदि बड़े लोग सब उसके पास आये। उनसे अक्रूर ने इस प्रकार कहा।

"कंस महाराज अपने धनुष का जोर शोर से उत्सव करना चाहते हैं। तुम सब अपने अपने कर लाकर दो। दावतों के लिए दूध, घी आदि भेजो। कंस महाराज यह भी चाहते हैं कि इस उत्सव में बलराम और कृष्ण उपस्थित हों। तुम तुरत निकल पड़ो। मैं इन दोनों को रथ में बिठाकर पीछे ही चलता हूँ।"

अरण्य पुराण

[१२]

मौवली ने अपने मित्रों को देखा। उसकी आँखें चौंधिया गईं। उसने अपने भाइयों के पास जाकर कहा—" क्या किया जाय, मुझे नहीं समझ में आ रहा है। मेरी तरफ एक बार देखो।" वे उसकी ओर न देख सके " बताओ, हम पाँचों में कौन सरदार है?" मौवली ने उनसे पूछा।

" तुम ही हो, छोटे भाई " कहते हुए बड़े भाई ने मौवली के पैर चाटे।

" तो मेरे साथ आओ...." मौवली ने रास्ता निकाला। बघेल भी उनके पीछे चल पड़ा, भालू कुछ न कह पाया। वह फिक्र में पड़ गया।

मौवली चुप रहा। जिस रास्ते पर बलदेव आ रहा था, उसी पर वह कुछ देर चलता रहा। बलदेव कन्धे पर बन्दूक रखे, धीमे धीमे भाग रहा था।

मौवली जब ग्राम से निकला था, तो पीठ पर शेर का चमड़ा लेकर आया था। अकेला और उसका " बड़ा भाई " उसके पीछे आये थे। तीनों के पदचिन्ह साफ साफ दिखाई दे रहे थे।

पर जब बलदेव उस जगह पहुँचा, जहाँ अकेले ने वे चिन्ह मिटा दिये थे, तो बलदेव रास्ता न जान सका। वह बूढ़ा एक जगह बैठकर खाँसा। गला साफ करके इधर उधर रास्ता देखने की कोशिश करने लगा। वह न जानता था कि कुछ दूरी पर ही बारह आँखें उसको देख रही थीं।

"चिन्ह पाने से पहिले उसकी झुंझलाहट जाती रहेगी। यह करता क्या है?" बघेल ने पूछा।

"क्या करते हैं? खाते हैं नहीं तो धुँआ उगलते हैं। एक क्षण उनके मुख खाली नहीं रहते।" मौवली ने बलदेव को अपनी ओर धुँआ उगलते देख कहा।

इतने में कुछ कोयलेवालों ने आकर बलदेव से कुछ बात की। चूँकि बीस मील तक एक अच्छे बन्दूकची के तौर पर बलदेव की ख्याति पहुँची हुई थी। जब सब मिलकर तम्बाखू पी रहे थे, तो बलदेव ने उनको मौवली नाम के गन्दे लड़के की कहानी नमक मिर्च लगाकर सुनाई। यह सब देखने के लिए बघेल आदि उसके पास गये। वह कह रहा था कि शेरखान को सचमुच उसने ही मारा था। तब मौवली मेड़िया बन गया और घंटो उसके साथ लड़ता रहा। फिर वह आदमी बन गया और उसने उसकी बन्दूक पर जादू लगा दिया। जब उसके जादू करने पर उसने गोली छोड़ी, तो वह मौवली के न लगकर, बलदेव के भैंस को ही लगी। चूँकि गाँव में उससे अधिक

मौवली और उसके मेड़िये भाइयों ने बलदेव के चारों ओर खूब बातें कीं। पर उनकी आवाज उस मनुष्य को न सुनाई दी।

बलदेव झुककर, इधर उधर देखता कुछ गुन गुनाया।

"क्या कह रहा है वह?" बड़े भाई ने मौवली से पूछा।

"उसे ऐसा लग रहा है जैसे मेड़िये उसके चारों ओर नाच रहे हों। इस प्रकार चिन्ह उसने पहिले कभी न देखे थे। उसे झुंझलाहट होगी ही।"

दिलेर नहीं था, इसीलिए ही उन्होंने मौवली को मार आने के लिए उसे भेजा था। वे इतने से भी नहीं माने। गाँववालों ने उस गन्दे लड़के की माँ बाप को यानि मेस्सुआ और उसके पति को उनके घरों में कैद कर दिया था। उनको सताकर उन्होंने उन से सच निकलवाया। यानि यह स्वीकृत करवाया कि वे जादू टोना जानते थे। फिर उनको वे जीते जी जला देंगे।

"वे, कब जला दिये जायेंगे?" कोयलेवालों ने पूछा—यह मनोरंजन वे स्वयं अपनी आँखें देखना चाहते थे।

"पहिले इस जंगली लड़के को मारना होगा। जब तक मैं वापिस नहीं जाऊँगा, तब तक यह न होगा।" बलदेव ने कहा। उसने यह भी बताया कि उसके जला दिये जाने के बाद उसकी ज़मीन जायदाद गाँववाले आपस में बाँट लेंगे। मेस्सुवा के पास बड़ी अच्छी गायें हैं।

"तो भाई, अगर यह बात अंग्रेजों को मालूम हो गई तो अच्छी आफत आयेगी। इन अंग्रेजों की अक्लबक्ल कुछ नहीं होती। अगर उन लोगों को जला दिया गया, तो वे यूँहि खाली नहीं बैठेंगे।"

"इसमें कौन-सी बड़ी बात है? गाँव का मुखिया रिपोर्ट लिख देगा कि मेस्सुवा और उसका पति साँप के काटे से मर गये थे। इस सबका इन्तजाम हमने पहिले ही कर लिया है। बाकी काम इस जंगली लड़के को मारना ही है। क्या वह लड़का तुमको कहीं दिखाई दिया?" बलदेव ने पूछा।

कोयलेवाले डर के कारण चारों ओर देखने लगे। "भगवान की कृपा से हमने नहीं देखा है। परन्तु भाई तुम जैसे दिलेर को बिना दीखे वह कितने दिन रहेगा? अन्धेरा हो रहा है, हम गाँव

जाकर उन जादू करनेवालों को देखेंगे।" उन्होंने कहा।

उस जंगली को मारना ही इस समय मेरा काम है। परन्तु तुम जैसे निहत्थों का जंगल में जाना बड़ा खतरनाक है। वह भेड़िया भूत कभी भी तुम्हारे सामने आ सकता है। इसलिए मैं तुम्हारे साथ आता हूँ, चलो। जब यह जंगली तुम्हें दिखाई देगा, तब देखना यह दिलेर बहादुर शिकारी क्या करता है? मुझ पर कोई आफत न आये। इसलिए उस ब्राह्मण ने मुझे यह ताबीज जो दी है।" बलदेव ने कहा।

"क्या कह रहा है वह? क्या कह रहा है? भेड़िये उससे पूछते जाते थे। मौवली जो कुछ सुन रहा था, वह उनसे कहता जाता था। पर वह चालाक क्या कह रहा था, वह न जान सका। उसने उनको बताया कि जिन्होंने उसका भरण पोषण किया था, उनको उन्होंने पिंजड़े में रख दिया था।

"मनुष्यों ने मनुष्यों को पिंजड़ों में रख दिया है!" बघेल ने पूछा।

"न मालूम क्या है? मुझे उनकी बातचीत पूरी तरह समझ में नहीं आ रही है। मेस्सुवा का और उसके पति का न मालूम उनसे क्या सम्बन्ध है कि उनको पिंजड़े में रख दिया है। लाल फूल की बात क्यों उठाई जा रही है? कुछ भी हो, जब तक बलदेव वापिस नहीं चला जाता, तब तक उनका कुछ नहीं बिगाड़ा जायेगा। इसलिए...." कहता मौवली अपने चाकू की मूठ पकड़कर कुछ सोचने लगा।

(अभी है)

६६. वीनस के जलमार्ग

वीनस (इटली) नगर के कुछ भागों में नहरें ही मार्ग हैं। यात्री इन नहरों में "गोन्डोला" में यात्रा करके आनन्द पाते हैं। नहरों पर बहुत से पुल हैं। चित्र में "आहों का पुल" दिखाई दे रहा है। प्रसिद्ध यात्री मार्कोपोलो यहीं का था।

Photo by Madan Gopal
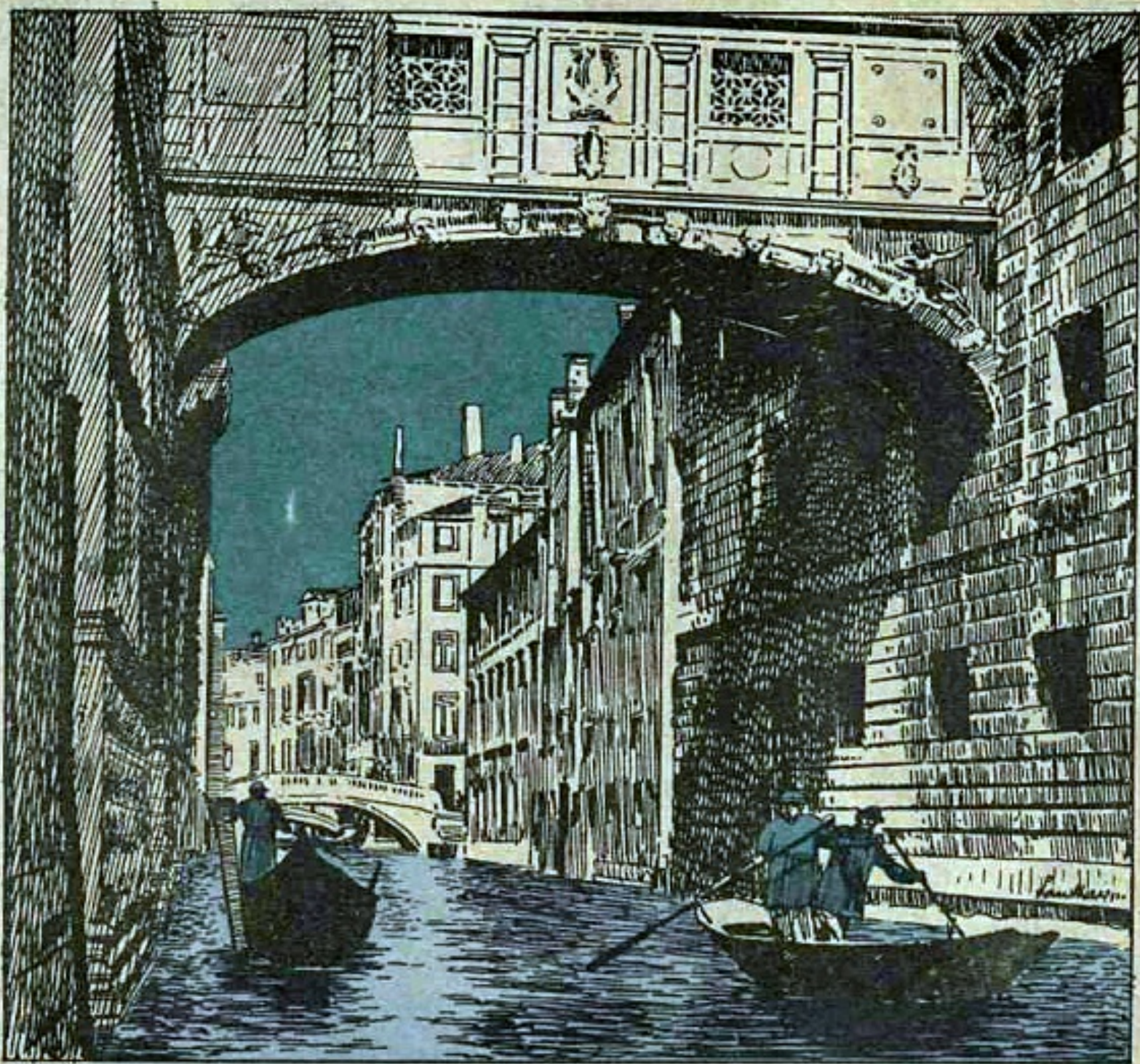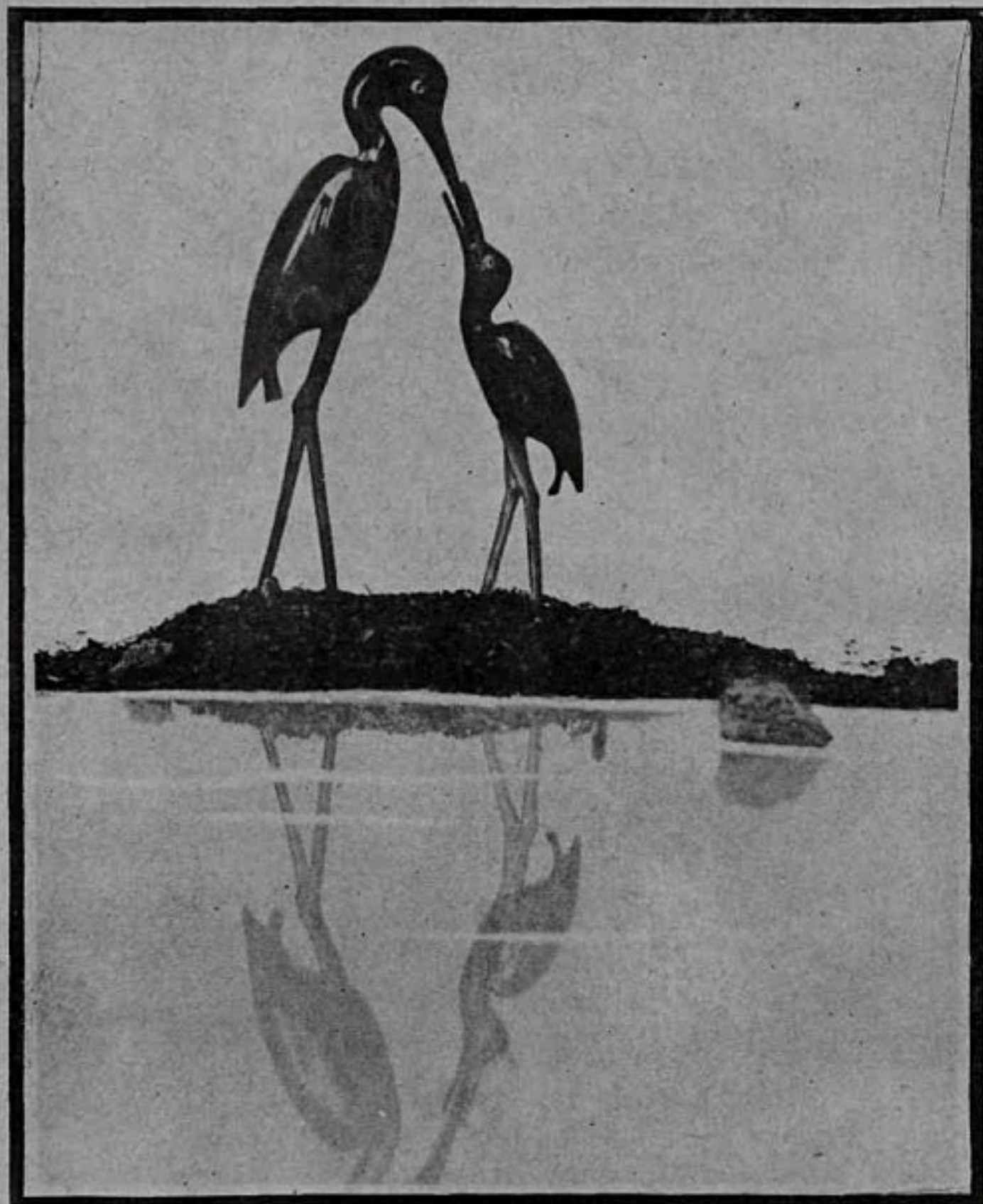
पुरस्कृत परिचयोक्ति

माँ का प्यार अतुलनीय जग में!

प्रेषक : तपनकुमार मुखर्जी - मेरठ

Photo by Anant Desai

पुरस्कृत परिचयोक्ति

पर मालिक देता है चकमें !!

प्रेषक :
तपनकुमार मुखर्जी - मेरठ

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अगस्त १९६७ :: **पारितोषिक १०)**

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ जून १९६७ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

जून – प्रतियोगिता – फल

जून के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **माँ का प्यार अतुलनीय जग में !**

दूसरा फ़ोटो : **पर मालिक देता है चकमें !!**

प्रेषक : **तपनकुमार मुखर्जी,**

C/o श्री डी. एन. मुखर्जी, १० बी. लखपतसिंह क्वार्टर्स, तिलक रोड, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

CHANDAMAMA (Hindi) JUNE 1967 Regd. No. M. 5452

अरण्य पुराण